कुरुक्षेत्र

अप्रैल 1995 मूल्य पांच रुपये

नई पंचायती राज व्यवस्था के दो वर्ष

महिला समृद्धि योजना पुरस्कारों की घोषणा

प्रथम महिला समृद्धि योजना पुरस्कारों की घोषणा कर दी गई है। योजना के सर्वश्रेष्ठ कार्यान्वयन के लिए तमिलनाडु को 3 लाख 50 हजार रुपये का पहला पुरस्कार प्रदान किया जाएगा। दो लाख 50 हजार रुपये का दूसरा पुरस्कार आंध प्रदेश को और दो लाख रुपये का तीसरा पुरस्कार गोवा को दिया जाएगा। केंद्र शासित प्रदेशों के अंतर्गत चंडीगढ़ को एक लाख 50 हजार रुपये का पहला पुरस्कार और पांडिचेरी को 75,000 रुपये का दूसरा पुरस्कार मिलेगा।

महिला समृद्धि योजना ग्रामीण महिलाओं की आर्थिक स्थिति सुधारने के उद्देश्य से 2 अक्तूबर, 1993 को शुरू की गई थी। योजना का उद्देश्य ग्रामीण महिलाओं में बचत की आदत को बढ़ावा देना है।

शुरू से ही यह योजना बड़ी लोकप्रिय हुई। इसके अंतर्गत अब तक 72 लाख ग्रामीण महिलाएं अपना खाता खोल चुकी हैं और इसमें लगभग 66 करोड़ रुपये जमा किए जा चुके हैं।

एक साल की छोटी सी अवधि में महिला समृद्धि योजना ने कई सफलताएं हासिल की हैं। मध्य प्रदेश के मंदसौर जिले में 44 गांवों को पूरी तरह योजना के अंतर्गत शामिल कर लिया गया है। इन गांवों में प्रत्येक घर से महिलाएं इस योजना में बचत करती हैं। इसी तरह केरल के पलकड़ में भी 2604 परिवारों ने महिला समृद्धि योजना में अपने-अपने खाते खोले हैं।

योजना की एक अन्य उल्लेखनीय विशेषता देश के आदिवासी क्षेत्रों में किया गया काम है। अब तक इन क्षेत्रों में योजना के अंतर्गत आदिवासी क्षेत्रों में आठ लाख तेरह हजार खाते खोले जा चुके हैं जिसके तहत 6 करोड़ 60 लाख रुपये जमा किए गए हैं।

योजना को और लोकप्रिय बनाने में राज्यों के प्रयासों को तेज करने के लिए यह पुरस्कार योजना शुरू की गई है।

साभार : पत्र सूचना कार्यालय

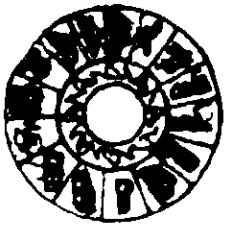

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण क्षेत्र एवं रोजगार मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र आदि भेजिए। लघु कथाओं का भी स्वागत है। अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है। 'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने व अंक न मिलने की शिकायत, व्यापार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

वर्ष 40 अंक 6 चैत्र-वैशाख 1917, अप्रैल 1995

कार्यकारी संपादक : बलदेव सिंह मदान
उप संपादक : ललिता जोशी

उप निदेशक (उत्पादन) : एस.एम. चहल
विज्ञापन प्रबंधक : बैजनाथ राजभर
सहायक व्यापार व्यवस्थापक : पी० एन० बुलकुंडे
आवरण सज्जा : बिमल

एक प्रति : पांच रुपये वार्षिक चंदा : 50 रुपये

फोटो साभार : रमेश चंद्र, फोटो प्रभाग, ग्रामीण क्षेत्र एवं रोजगार मंत्रालय

इस अंक में

पंचायती राज : संवैधानिक परिप्रेक्ष्य	ए० के० दूबे	3
नई पंचायती राज व्यवस्था : तब और अब	डा० महीपाल	8
पंचायती राज संस्थाओं को सुदृढ़ करने के लिए पहल	सुषमा सिंह	11
पंचायतों को कारगर बनाने की आवश्यकता	सुभाष चन्द्र 'सत्य'	17
पंचायती राज संस्थाओं के लिए आयोजना और वित्त व्यवस्था	ए० के० दूबे व संजय मित्रा	21
पंचायती राज : अतीत एवं वर्तमान	डा० बद्री विशाल त्रिपाठी	26
ग्रामीण विकास का अभिन्न अंग है ग्राम पंचायतों की प्रतिष्ठा	रामजी प्रसाद सिंह	29
विधाता (कहानी)	गजानन वर्मा	33
मध्य प्रदेश में सत्ता का विकेन्द्रीकरण गांवों के गलियारों तक	भंवर सिंह	35
ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के उचित क्रियान्वयन हेतु सुझाव	डा० शिवा कांत सिंह	38
पंचायती राज पर विनोबा जी के विचार	डा० अशोक कुमार सिंह	40
सफल मधुमक्खी पालन की जानकारी	हरीचन्द एवं रामाश्रित सिंह	42
महिला साक्षरता : एक चुनौती	सुखपाल जी श्रीवास्तव	45
भारत में स्त्री-पुरुष अनुपात : एक विश्लेषण	अरविन्द कुमार सिंह	46
महिलाओं के विकास और कल्याण की ओर बढ़ते कदम	डा० उमेश चन्द्र	48
भारत का ग्रामीण शैक्षिक परिवेश	धनंजय चोपड़ा	51

'कुरुक्षेत्र' हिंदी के अतिरिक्त अंग्रेजी में भी प्रकाशित होती है। इसमें प्रकाशित लेखों में अभिव्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं तथा यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार सम्पादक, कुरुक्षेत्र (हिन्दी), ग्रामीण क्षेत्र और रोजगार मंत्रालय, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें। दूरभाष : 384888

पाठकों के विचार

ग्रामीण स्वच्छता की समस्या पर 'कुरुक्षेत्र' दिसम्बर, 1994 के अंक में सभी लेखकों के विचार बहुत ही अच्छे लगे। पर सिर्फ विचार प्रकट करने मात्र से स्वच्छता आ जाती तो हाल ही में देश में प्लेग जैसी महामारी न फैलती। महात्मा गांधी या पंडित जवाहर लाल नेहरू या अन्य विभूतियों के विचारों को दिमाग में ठूंस लेने मात्र से कुछ नहीं होगा। उन्हें कार्य में परिणत करना होगा।

सच तो यह है कि आज भी गांव के लोग और शहर के भी अनेक शिक्षित लोग स्वच्छता के मायने नहीं जानते, वरना अपनी छत, बालकनी या खिड़की से सड़कों या गलियों में कूड़ा न फेंकते।

यतीश मिश्र का लेख "ग्रामीण स्वच्छता : समस्या और समाधान" के अंतर्गत यूनिसेफ की भूमिका बेहद सराहनीय है।

सुनील कुमार,
10-ए/16, डाला सीमेन्ट,
फैक्ट्री, सोनभद्र, उ.प्र.
पिन-231207

'कुरुक्षेत्र' गांवों की उन्नति के लिए प्रेरणा का पुंज है। यह पत्रिका गांवों की जनता को नयी दृष्टि देती है, जीवन जीने की नयी कला सिखाती है और गांधी जी के सपनों का भारत बनाने के लिए एक नींव का कार्य करती है।

जनवरी 1995 का अंक पारिस्थितिकी संतुलन बनाये रखने के लिए जनता का आह्वान करता है। नये-नये प्रयोग प्रस्तुत कर ऊर्जा संकट से बचने हेतु गैर परम्परागत साधनों के उपयोग करने की बात कही गई है। निसंदेह पत्रिका ग्रामीण भारत का नव निर्माण करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है।

इस अंक के विद्वान लेखकों को हार्दिक दिल से धन्यवाद देता हूं।

सुधीर शर्मा,
ग्राम : साहेबगंज, पो. चम्पानगर,
जिला-भागलपुर (बिहार),
पिन-812004

दिसम्बर के 'कुरुक्षेत्र' का अंक पढ़ा। अभी तक नियमित पाठक नहीं था। लेकिन इस अंक को पढ़ने के बाद मैंने पाया कि यह वाकई वैसा ही है जैसा कि आई.ए.एस. टापर्स इसके बारे में लिखते हैं।

इस अंक में आपने हिन्दुस्तान के गांवों की मूल समस्याओं के बहुत ही अहम पहलुओं को उजागर करने की कोशिश की है और उचित व सटीक समाधान भी दर्शाया है। गांवों में सफाई की समस्या, शहर की ओर पलायन रोकने तथा जीविका चलाने के लिए स्वरोजगार पर बल, नेहरू जी के सपनों का साकार करने के लिए शौचालयों के निर्माण के आसान तरीके तथा सबसे अहम बात कि इन कार्यों में जन भागीदारी की आवश्यकता पर लेख सब अपने आप में बेजोड़, ज्ञानवर्धक और जानकारियों को समेटे हुए हैं।

आपका यह अंक बापू एवं चाचा नेहरू के "आदर्श ग्राम" के स्वप्न को मूर्त रूप देने में सहायक सिद्ध होगा तथा नई जन-चेतना उत्पन्न करेगा, ऐसी मेरी आशा है।

सुमन कुमार,
रूम नं. 61, आचार्य नरेन्द्र देव, छात्रावास,
बी.एच.यू. वाराणसी

पाठकों के विचार

इस पत्रिका में "पाठकों के विचार" स्तंभ में पाठकगण ग्रामीण विकास के विभिन्न पहलुओं पर अथवा इस पत्रिका में प्रकाशित लेखों पर अपने विचार भेज सकते हैं। ये विचार दो सौ शब्दों से अधिक के न हों और सम्पादक, कुरुक्षेत्र, कमरा न० 467, कृषि भवन, नई दिल्ली-110001 के पते पर भेजे जाएं।

इसके लिए कोई पारिश्रमिक देय नहीं होगा परंतु उन पाठकों को पत्रिका की एक प्रति भेजी जाएगी जिनके विचार इस स्तंभ में प्रकाशित होंगे।

—सम्पादक

पंचायती राज : संवैधानिक परिप्रेक्ष्य

ए. के. दूबे*

स्थानीय शासन को संविधान के आठवें अनुच्छेद में राज्य सूची के अंतर्गत एक विषय के रूप में शामिल किया गया है। संविधान की धारा 40, जिसमें ग्राम-शासन की बात कही गई है, इस प्रकार है:-

"ग्राम पंचायतों को संगठित करने और उन्हें ऐसी शक्तियां व अधिकार प्रदत्त करने के लिए राज्य कदम उठाएगा, जो उन्हें स्वशासी इकाइयों के रूप में काम करने के योग्य बनाने के लिए जरूरी होंगे"

यह धारा राज्य नीति निर्देशक सिद्धांतों का एक अंग है। लेकिन इसे लागू करने के लिए कोई कानून नहीं बनाया गया था।

गांवों के चहुंमुखी आर्थिक विकास के उद्देश्य से राष्ट्रव्यापी सामुदायिक विकास कार्यक्रम की शुरुआत करना जरूरी था ताकि एक ऐसा संस्थागत तंत्र बनाया जाए, जिसमें स्थानीय समुदायों को विकास प्रक्रिया में शामिल किया जा सके। सन् 1957 में बलवंतराय मेहता समिति के नाम से विख्यात सामुदायिक विकास और पंचायती राज अध्ययन दल ने एक ऐसी त्रिस्तरीय पंचायती राज प्रणाली की स्थापना की सिफारिश की थी, जिसके मध्यवर्ती स्तर अर्थात पंचायत समिति को, विकेन्द्रीकरण की योजना में प्रमुख स्थान प्राप्त था। समिति का क्षेत्राधिकार सामुदायिक विकास खंड के क्षेत्राधिकार के समान था तथा इसके सदस्यों का चयन सीधे किया जाता था। इस प्रणाली की व्यवस्थानुसार पंचायत समितियों के प्रधानों से मिलकर जिला परिषद बनती थी जिसके अध्यक्ष जिलाध्यक्ष/उपायुक्त होते थे। यह कल्पना की गई थी कि जिला स्तर पर यह एक परामर्शदात्री संस्था होगी। इस त्रिस्तरीय प्रणाली के सबसे निचले स्तर पर ग्राम पंचायतों को रखा गया। इसलिए, अधिकांश राज्यों ने पंचायती राज कानून लागू किए। वैसे तो अधिकांश राज्यों ने सामान्यतया बलवंतराय मेहता समिति द्वारा सुझाई गई प्रणाली का अनुसरण किया, लेकिन स्थानीय आवश्यकताओं व मान्यताओं को देखते हुए कुछ स्थानीय परिवर्तन किए गए। उदाहरण के लिए, महाराष्ट्र और गुजरात ने पर्याप्त प्रशासनिक शक्तियों वाली जिला परिषदों को मजबूत बनाकर जिला स्तर को प्रमुखता प्रदान की। फिर भी, राजनीतिक और प्रशासनिक शक्तियों के विकेन्द्रीकरण का विचार नीति नियंताओं को उस समय नहीं सूझा।

पंचायती राज की दिशा में किया गया प्रथम प्रयोग उत्साहवर्द्धक नहीं रहा। सामुदायिक विकास कार्यक्रम का जोर घटते ही विकास खंडों को मिलने वाली धनराशि की भारी मात्रा घटते-घटते बहुत कम हो गई। कई राज्यों में बहुत लम्बे अर्से तक पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव नहीं कराये गये। कुछ राज्यों में जिला स्तर पर समानांतर संस्थाओं ने जन्म ले लिया, जिससे विकास नियोजन और क्रियान्वयन के बारे में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा।

इन सब बातों को देखते हुए, इस पूरे मसले पर नए सिरे से विचार करने के लिए अशोक मेहता समिति गठित की गई। समिति ने 1978 में प्रस्तुत अपनी रिपोर्ट में पंचायती राज के महत्व पर एक बार फिर बल दिया, परंतु इस समिति और बलवंतराय मेहता समिति के सुझावों में एक महत्वपूर्ण अंतर था। इसने दो स्तरों वाले पंचायती राज ढांचे का सुझाव दिया।

जिला स्तर पर जिला परिषद और जिला परिषद से नीचे 20 से 30 हजार तक की जनसंख्या वाले ग्राम समूहों के लिए मंडल पंचायत परिषद को प्रमुख भूमिका दी गई। समिति ने यह भी सुझाव दिया कि राज्य स्तर से नीचे जिला प्रथम स्तर हो, जहां सार्वजनिक देखरेख में विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया चले। समिति ने पंचायत चुनावों के सभी स्तरों पर राजनीतिक दलों की अधिकारिक स्तर पर भागीदारी की भी सिफारिश की। हालांकि केन्द्रीय स्तर पर अशोक मेहता समिति की सिफारिशों पर कोई कार्रवाई नहीं की गई, लेकिन तीन राज्यों पश्चिम बंगाल, आंध्र प्रदेश और कर्नाटक ने अपने-अपने यहां पंचायती राज को नया जीवन देने के लिए कदम उठाए, जिनके अंतर्गत जिला परिषदों को सर्वाधिक महत्वपूर्ण दर्जा दिया गया और पंचायती राज संस्थाओं को पर्याप्त अधिकार और दायित्व सौंपे गए।

*लेखक ग्रामीण क्षेत्र और रोजगार मंत्रालय में उप सचिव हैं

ग्रामीण विकास के लिए मौजूदा प्रशासनिक व्यवस्थाओं की समीक्षा के लिए 1985 में योजना आयोग द्वारा नियुक्त जी.वी. के. राव समिति ने पंचायती राज संस्थाओं में नवजीवन का संचार करने की सिफारिश की, ताकि ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के नियोजन, क्रियान्वयन और निगरानी के काम का अधिकाधिक उत्तरदायित्व उन्हें सौंपा जा सके। समिति ने नियोजन कार्यों को जिला स्तर पर विकेन्द्रित नियोजन इकाइयों को सौंपने पर भी विचार किया।

तब भारत सरकार ने जून 1986 में डा. एल.एम. सिंघवी की अध्यक्षता में एक समिति गठित की जिसे पंचायती राज संस्थाओं को नया जीवन देने के लिए एक अवधारणा पत्र तैयार करने का काम सौंपा गया। समिति ने सिफारिश की कि पंचायती राज संस्थाओं को संविधान के अंतर्गत मान्यता प्रदान की जाए, संरक्षण प्रदान किया जाए तथा इसके संविधान में एक नया अध्याय शामिल किया जाए। समिति ने पंचायती राज संस्थाओं के लिए नियमित, निष्पक्ष और स्वतंत्र चुनाव कराने के बारे में संवैधानिक प्रावधानों का भी सुझाव दिया।

भारत सरकार ने 64वां संविधान संशोधन विधेयक प्रस्तुत किया, जिसे लोकसभा ने 10 अगस्त 1989 को पारित कर दिया। यह एक व्यापक विधेयक था, जिसमें सभी राज्यों और 20 लाख से अधिक जनसंख्या वाले केन्द्र शासित प्रदेशों में ग्रामीण, मध्यवर्ती और जिला स्तरों की समान तीन-स्तरीय पंचायती राज प्रणाली के गठन, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और महिलाओं के लिए आरक्षण व्यवस्था, सभी स्तरों पर पंचायतों के लिए पांच वर्ष की सुनिश्चित अवधि और समय से पूर्व इन संस्थानों के भंग होने की स्थिति में छः महीने के भीतर चुनाव कराने की व्यवस्था, पंचायती राज संस्थानों को विशेष शक्तियां, अधिकार और दायित्व, संविधान में नई अनुसूची (11वीं अनुसूची) जोड़ना, पंचायतों को सौंपे जा सकने वाले विषयों का उल्लेख, निर्वाचन आयोग द्वारा पंचायतों के चुनाव कराने की व्यवस्था आदि पंचायती राज संस्थाओं से सम्बन्धित अत्यावश्यक पहलुओं का समावेश किया गया था। लोक सभा ने तो इस विधेयक को मंजूरी दे दी, परंतु राज्य सभा में यह पारित नहीं हुआ।

1990 में, पंचायती राज संस्थानों को मजबूत बनाने से सम्बन्धित मसलों पर नए सिरे से विचार किया गया। जून 1990 में तत्कालीन प्रधान मंत्री की अध्यक्षता में मुख्यमंत्रियों का एक सम्मेलन हुआ, जिसमें इस पर विचार विमर्श हुआ। सम्मेलन ने एक नए संविधान संशोधन विधेयक को पेश किए जाने के प्रस्तावों का समर्थन किया।

परिणामस्वरूप, 7 सितम्बर 1990 को लोकसभा में संविधान (74वां संशोधन) विधेयक प्रस्तुत किया गया। लेकिन इस विधेयक पर चर्चा तक नहीं की गई।

इस मामले पर 1991 में एक बार फिर विचार किया गया। संविधान (72वां) संशोधन विधेयक 1991 16 सितम्बर 1991 को प्रस्तुत किया गया, जिसे बाद में ब्यौरेवार समीक्षा के लिए दिसम्बर 91 में संसद की संयुक्त प्रवर समिति को सौंप दिया गया। संयुक्त समिति ने जुलाई 92 में अपनी रिपोर्ट, संसद को प्रस्तुत की। अंततः 22 दिसम्बर 1992 को संविधान (72वां संशोधन) विधेयक को लोकसभा ने पारित कर दिया तथा राज्य सभा ने इसे 23 दिसम्बर 1992 को पारित कर दिया। रिकार्ड समय में 17 राज्यों ने इस विधेयक की पुष्टि कर दी। भारत के राष्ट्रपति ने 20 अप्रैल, 1993 को इस विधेयक को अपनी स्वीकृति प्रदान की और संविधान (73वां संशोधन) अधिनियम, 1992, 24 अप्रैल 1993 से लागू हो गया।

संविधान (73वां संशोधन) अधिनियम, 1992 की प्रमुख विशेषताएं

73वें संशोधन संविधान अधिनियम में स्थानीय स्व-शासन की इकाइयों के रूप में तीन स्तर की पंचायतों की स्थापना का प्रावधान है। इसमें पंचायत संस्थाओं के लिए नियमित चुनावों, एक राज्य निर्वाचन आयोग और एक राज्य वित्त आयोग की स्थापना, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जन जातियों और महिलाओं के लिए आरक्षण, पिछड़ी जातियों के नागरिकों के लिए आरक्षण के अधिकार प्रदान करने वाले प्रावधानों आदि की व्यवस्थाएं भी हैं। इन संस्थाओं को उपयुक्त स्तरों पर पर्याप्त अधिकार व दायित्व सौंपे जाएंगे ताकि वे आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए योजनाएं तैयार कर सकें और उन्हें अमल में ला सकें।

ग्राम सभा को पंचायती राज प्रणाली का आधार माना गया है। यह राज्य विधान मण्डलों द्वारा सौंपे गए कार्यों तथा अधिकारों का इस्तेमाल करेगी।

गांवों, मध्यवर्ती और जिला स्तरों पर पंचायतों के तीन स्तर होंगे। बीस लाख से कम जनसंख्या वाले राज्यों को ही यह अधिकार होगा कि यदि वे चाहें तो मध्यवर्ती स्तर पर पंचायतों का गठन न करें। धारा 243 एल के अधीन, राष्ट्रपति द्वारा केन्द्रशासित प्रदेशों के लिए विशेष व्यवस्था की जा सकती है।

पंचायतों में आरक्षण

पंचायतों में प्रत्येक स्तर पर सभी स्थानों को प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों से सीधे चुनावों द्वारा भरा जाएगा। ऐसे निर्वाचन क्षेत्र की जनसंख्या और क्षेत्र के लिए निर्धारित स्थानों का अनुपात पूरे पंचायत क्षेत्र में समान रहेगा।

हर स्तर पर अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के लिए पंचायत क्षेत्र विशेष में उनकी जनसंख्या के अनुपात में और महिलाओं के लिए कुल स्थानों के कम से कम एक तिहाई स्थान आरक्षित होंगे। इसी प्रकार पंचायत में प्रत्येक स्तर पर अध्यक्षों के पदों की कुल संख्या के कम से कम एक तिहाई पद महिलाओं के लिए आरक्षित होंगे। अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए ये पद उसी अनुपात में आरक्षित होंगे जो राज्य में कुल जनसंख्या में उनकी जनसंख्या का अनुपात है। इसके अतिरिक्त राज्यों के विधानमण्डलों द्वारा पंचायत में किसी स्तर पर या अध्यक्षों के पदों के लिए किसी भी स्तर पर पिछड़ी जातियों के नागरिकों के लिए स्थानों का आरक्षण किया जा सकता है।

प्रत्येक स्तर की पंचायत का कार्यकाल पांच वर्ष का होगा तथा यदि वह पहले भंग हो जाती है या कार्यकाल समाप्त हो जाता है, तो भंग होने या कार्यकाल समाप्ति की तिथि के छह महीनों के भीतर दुबारा चुनाव कराना अनिवार्य होगा।

24 अप्रैल 1993 से अर्थात 73वें संविधान संशोधन के लागू होने की तिथि से एक वर्ष के भीतर और उसके बाद हर पांचवें वर्ष की समाप्ति के बाद प्रत्येक राज्य में एक वित्त आयोग गठित किया जाएगा, जो राज्यों और प्रत्येक स्तर पर पंचायतों के बीच वित्तीय संसाधनों के वितरण तथा हस्तांतरण के नियंत्रक-सिद्धांतों और पंचायतों की वित्तीय स्थिति सुधारने के उपायों पर विचार करेगा।

पंचायतों में मतदाता सूचियां तैयार करने और सभी चुनाव करवाने का काम राज्य निर्वाचन आयोग का होगा, जिसका गठन प्रत्येक राज्य में किया जाएगा।

और अंत में, 29 मदों वाली ग्यारहवीं अनुसूची जोड़ी गई है, जिसके द्वारा स्थानीय महत्व के कामों की योजना बनाने और क्रियान्वयन में पंचायती राज संस्थानों को प्रभावी भूमिका प्रदान की गई है। इन कामों में पेयजल, कृषि भूमि संरक्षण और जल प्रबंध से लेकर संचार, गरीबी हटाने के कार्यक्रम, परिवार कल्याण, शिक्षा, पुस्तकालय तथा सांस्कृतिक गतिविधियां, सामुदायिक परिसम्पत्तियों के रखरखाव आदि के काम शामिल होंगे।

संविधान (73वां संशोधन) अधिनियम, 1992 मेघालय, मिजोरम और नगालैंड राज्यों तथा धारा 243 एम में उल्लिखित कुछ मान्य क्षेत्रों पर लागू नहीं होता। इन क्षेत्रों में धारा 244 (1) के अंतर्गत अधिसूचित क्षेत्र और धारा 244 (2) के अंतर्गत जन जातीय क्षेत्र, मणिपुर के पर्वतीय क्षेत्र, (जिनके लिए जिला परिषद अधिनियम मौजूद है) तथा पश्चिम बंगाल राज्य में दार्जिलिंग जिला (जिसके लिए दार्जिलिंग गोरखा पर्वतीय परिषद है) आते हैं। यहां यह उल्लेखनीय है कि इम्फाल, थोउबल और बिष्णुपुर के तीन घाटी जिलों के अलावा समूचे राज्य में फैले पर्वतीय क्षेत्र न तो संविधान की पांचवीं अनुसूची में आते हैं और न ही छठी अनुसूची में।

धारा 243 एम (1) के अनुसार संविधान का खंड-9, उन जनजातीय क्षेत्रों पर लागू नहीं होगा जिन पर छठी अनुसूची के प्रावधान लागू होते हैं। ये क्षेत्र इस प्रकार हैं:-

(क) असम का उत्तरी कछार पर्वतीय जिला और मिकिर पर्वतीय जिला;

(ख) मेघालय के खासी, जयंतिया और गारो पर्वतीय जिला;

(ग) त्रिपुरा के जनजातीय क्षेत्र; और

(घ) मिजोरम का चकमा जिला, लाखेर जिला और पावीं जिला।

धारा 243 एम (1) में यह भी व्यवस्था है कि संविधान के खंड-9 के प्रावधान उन अनुसूचित इलाकों पर नहीं लागू होंगे जो संविधान की पांचवीं अनुसूची में अधिसूचित हैं। केवल आठ राज्यों में अधिसूचित इलाके हैं। वे इस प्रकार हैं:-

(क) आंध्र प्रदेशः (1) पूर्व गोदावरी, पश्चिम गोदावरी और विशाखापत्तनम एजेंसियां (2) महबूब नगर ताल्लुक (महबूब नगर जिला) (3) आदिलाबाद जिले के आदिलाबाद, किनवात, बोआंथ, उत्नूर, सेफाबाद, लक्षतिपेट, राजुरा और सिरपुर ताल्लुकों तथा (4) वारंगल जिले के पालोंचा मुलुज और येल्लानाडु ताल्लुक के कुछेक अधिसूचित क्षेत्र।

(ख) हिमाचल प्रदेशः (1) लाहौल और स्फीति जिला और किन्नौर जिला तथा (2) चम्बा जिले की पांगी तहसील और भरमोर सब तहसील

(ग) बिहारः (1) रांची और सिंहभूम जिले; (2) पलामू जिले की लटेहर सब डिवीजन (3) गढ़वा जिले का भंडारिया ब्लाक (4) संथाल परगना जिले के दुभका और जमात्रा सब डिवीजन (5) साहेबगंज जिले के पकुर और राजमहल तथा (6) गोडा जिले के बोअरीजोर और सुंदर पहाड़ी ब्लाक।

(घ) गुजरातः (1) डांग्स जिला और (2) सूरत भडूच वलसाड, पंच महल, वडोदरा और साबरकांठा जिलों के कुछ अधिसूचित क्षेत्र।

(ङ) मध्य प्रदेशः (1) झबुआ, मंडवा, सरगुना और बस्तर जिले तथा (2) धार, सरगोन, खंडवा, रतलाम, बेतुल, सिबनी, बालाघाट, होशंगाबाद रायगढ़, सीधी, बिलासपुर, दुर्ग, राजनांदगांव, रायपुर और छिंदवाड़ा जिलों के अधिसूचित क्षेत्र।

(च) उड़ीसाः (1) मयूरगंज, सुंदरगढ़ और कोरापुट जिले तथा (2) कियोंझर गंजम, कालाहांडी और बालेश्वर जिलों में अधिसूचित क्षेत्र।

(छ) राजस्थानः (1) बांसवाड़ा और डूंगरपुर जिले तथा (2) उदयपुर, चित्तौड़गढ़ और सिरोही जिलों के अधिसूचित क्षेत्र।

(ज) महाराष्ट्रः (1) ठाणे, नासिक, धुले, जलगांव, अहमदनगर, पुणे, नांदेड़, अमरावती, यवतमाल, गढ़चिरोली और चंद्रपुर जिलों में अधिसूचित क्षेत्र।

उल्लेखनीय है कि वास्तव में अधिसूचित क्षेत्र और जनजातीय क्षेत्र भारत सरकार अधिनियम 1935 में निहित आंशिक रूप से वर्जित क्षेत्रों और वर्जित क्षेत्रों की अवधारणा के रूपांतरित प्रतिरोपण हैं। इन क्षेत्रों को सांस्कृतिक दृष्टि से पिछड़ा माना जाता था।

इन क्षेत्रों के लिए बिल्कुल अलग व्यवस्था की बात पर शायद ही विवाद की गुंजाइश हो, क्योंकि इन जनजातीय क्षेत्रों की अपनी प्रशासनिक व्यवस्था थी जो केवल सामाजिक और पारम्परिक नियमों तक ही सीमित नहीं थी, बल्कि यह इससे भी आगे तक फैली थी और इसमें न्याय करने और व्यक्ति के आचरण के प्रति सामाजिक प्रतिक्रिया तक शामिल थे तथा अंततः इस प्रक्रिया ने जनजातीय सामाजिक मूल्यों को जीवित रखा था। इसलिए इस अवधारणा का बुनियादी उद्देश्य इन पारम्परिक समूहों या समाजों के परम्परागत अधिकारों को सुरक्षित रखना है और इसके साथ-साथ विकास के लाभ उन तक पहुंचाना भी है। यह अवधारणा जनजातीय सामाजिक रीति रिवाजों और विकास के बीच तालमेल पर बल देती है। लेकिन वास्तविक जीवन में जो चित्र उभरता है, वह इन दावों को खोखला सिद्ध करता है। वास्तविकता में तो इससे जनजातियों के शोषण और परिणामस्वरूप उनके कष्टों तथा उन्हें सुविधाओं से वंचित रखने की बात उजागर होती है।

अधिसूचित क्षेत्रों के लिए कानून

आंध्र प्रदेश, बिहार, हिमाचल प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, उड़ीसा और राजस्थान राज्यों के पंचायती राज कानून समान रूप से पूरे राज्य पर लागू होते हैं तथा अधिसूचित क्षेत्रों के लिए इनमें कोई अपवाद नहीं रखा गया है। कई लोगों के मतानुसार यह ऐसे क्षेत्रों पर जबरन कानून लागू करने का मामला है जिन पर ये कानून स्वयंमेव लागू होते ही नहीं हैं।

यहां पर कहा जा सकता है कि कानून को लागू करना विधान के मान्य स्वरूप में से एक है। कानून लागू करने की शक्ति का अभिप्राय वास्तव में किसी अधिनियम के खंडों को इस प्रकार से कानूनी रूप से लागू करना है जैसे कि पूरे अधिनियम को लागू कर दिया हो। किसी कानून का हवाला देकर या किसी कानून को उदधृत करके या किसी कानून या उसके किसी अंश को शामिल करने से कानून बनाया जा सकता है। राज्यपाल को ऐसे नियम बनाने का पूरा अधिकार है, जो कानून हों और जिस प्रकार संसद किसी राज्य विशेष पर लागू किए जाने के लिए कानून बना सकती है, उसी प्रकार राज्यपाल भी संविधान की पांचवीं अनुसूची के अनुच्छेद 5 के अंतर्गत अधिसूचित क्षेत्र पर संशोधनों में निर्दिष्ट कानूनी प्रावधानों को लागू कर सकता है।

इस मामले पर गौर करते समय पांचवीं अनुसूची के अंतर्गत राज्यपाल को प्रदत्त शक्तियों को भी ध्यान में रखना होगा। संविधान की पांचवीं अनुसूची के अनुच्छेद 5(1) में प्रावधान है कि सार्वजनिक अधिसूचना के द्वारा राज्यपाल निर्देश दे सकता है कि संसद या राज्य विधान मंडल का कोई अधिनियम विशेष किन्हीं अधिसूचित क्षेत्रों या उनके हिस्सों पर लागू होगा या नहीं। इसके लिए छूटों और रूपांतरणों को अधिसूचित किया जा सकता है। यह स्पष्ट है कि सम्बद्ध राज्यों द्वारा पारित किए जाने वाले नए पंचायती राज कानूनों को सीधे ही राज्य के राज्यपाल द्वारा संबद्ध जनजातीय सलाहकार परिषदों से परामर्श करके आवश्यक संशोधनों के साथ अधिसूचित क्षेत्रों पर भी लागू किया जा सकता है।

पांचवीं अनुसूची के अनुच्छेद 5(2) के अनुसार राज्यपाल द्वारा राज्य के किसी भी क्षेत्र के लिए जो फिलहाल अधिसूचित क्षेत्र हो, शांति और अच्छी सरकार की दृष्टि से आवश्यक नियम बनाए जा सकते हैं। इसलिए संविधान में यह प्रावधान समाविष्ट है ताकि इन क्षेत्रों में शांति और अच्छे शासन की आवश्यकता को पूरा किया जा सके और इस संबंध में केवल राज्यपाल ही इसकी आवश्यकता के बारे में निर्णय कर सकता है। इस संबंध में राज्यपाल की शक्तियों को व्यापक बताया गया है। कानून बनाने की उसकी शक्तियां संविधान की सातवीं अनुसूची की सभी तीनों सूचियों पर लागू होती हैं।

पांचवीं अनुसूची के अनुच्छेद 5 के अंतर्गत प्रदत्त शक्तियों के इस्तेमाल पर केवल प्रतिबंध है कि यदि जनजातीय सलाहकार परिषद हो तो कानून बनाने से पूर्व उससे सलाह ले ली जानी चाहिए तथा इसे राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए भिजवाया जाना चाहिए। राष्ट्रपति की स्वीकृति के बिना अनुच्छेद 5(2) के अंतर्गत कानून प्रभावी नहीं होगा।

संविधान के अनुच्छेद 245(1) में प्रावधान है कि संसद का कोई भी अधिनियम पूरे देश पर लागू होता है और राज्य विधानमंडल का कोई अधिनियम राज्य के संपूर्ण क्षेत्र पर लागू होता है। संविधान की पांचवीं अनुसूची का अनुच्छेद 5 इसका अपवाद है। जब तक राज्यपाल कोई अपवाद का प्रावधान नहीं करता है सामान्य अधिनियम पांचवीं अधिसूची में उल्लिखित क्षेत्रों पर लागू होगा।

इसलिए सामान्य अधिनियम के सीधे ही अधिसूचित क्षेत्रों सहित राज्य के संपूर्ण क्षेत्र पर लागू होने में कोई कठिनाई नहीं है।

विकल्प

पांचवीं अनुसूची के परिणामस्वरूप उत्पन्न होने वाली वास्तविक स्थिति तो यह है कि अनुच्छेद 243 एम(4)(बी) में निहित प्रावधानों से संविधान के खंड-9 के प्रावधानों को अधिसूचित क्षेत्रों तथा अनुच्छेद 243 एम(1) में निर्दिष्ट जनजातीय क्षेत्रों पर कानूनन लागू करने का संसद को अधिकार प्राप्त होता है। इसके लिए ऐसे कानून में निर्दिष्ट अपवाद व संशोधन किए जा सकते हैं। किसी भी कानून को अनुच्छेद 368 के उद्देश्य से संविधान में संशोधन नहीं माना जाएगा।

जून 1994 में भारत सरकार ने ग्रामीण विकास मंत्रालय में चुने हुए संसद सदस्यों और विशेषज्ञों की एक समिति गठित की जिसे अधिसूचित क्षेत्रों पर संविधान के खंड-9 के प्रावधानों को लागू करने के लिए कानून की प्रमुख विशेषताओं के बारे में सिफारिश करने का काम सौंपा गया था। समिति ने जनवरी 1995 में अपनी रिपोर्ट दे दी है। इसमें संविधान के अनुच्छेद 243 एम(4)(बी) के अंतर्गत संसद द्वारा कानून बनाने की सिफारिश की गई है।

जब सम्पूर्णता में विवेचन किया जाए तो लगता है कि संविधान का मंतव्य इन क्षेत्रों के लिए उपयुक्त उपाय लागू करने का है जिन्हें इन क्षेत्रों की विशेष परिस्थितियों पर विचार करने के बाद तय किया जाना चाहिए। इसके लिए संविधान की पांचवीं अनुसूची की धारा-5 के अंतर्गत राज्यपाल द्वारा या अनुच्छेद 243(एम)(4)(बी) के अंतर्गत संसद द्वारा पारित किए जाने वाले केंद्रीय कानून के जरिए विशेष प्रावधान किए जा सकते हैं। राज्यों द्वारा संविधान के इस मंतव्य को अधिक पसंद नहीं किया गया प्रतीत होता है क्योंकि राज्यपालों ने पांचवीं अनुसूची की धारा-5 के अंतर्गत प्रदत्त शक्तियों का शायद ही कभी इस्तेमाल किया हो। इससे यह धारणा जन्म लेती है कि संसद को अनुच्छेद 243 एम(4)(बी) के अंतर्गत कानून बनाना चाहिए, हालांकि यह विचित्र लगता है कि विकेंद्रीकरण के लिए कानून केंद्रीय सरकार द्वारा बनाया जाए।

अनुवाद : जया ठाकुर,
बी-212, नानक पुरा,
नई दिल्ली-29

73वें संविधान संशोधन के दो वर्ष

नई पंचायती राज व्यवस्थाः तब और अब

डा. महीपाल*

73वां संविधान संशोधन अधिनियम 24 अप्रैल 1993 को राष्ट्रपति के हस्ताक्षर के बाद कानून बना। इस तरह इस कानून को बने दो वर्ष होने जा रहे हैं। इस संशोधन को इसकी विशेषताओं के आधार पर दो भागों में बांटा जा सकता है : (1) अनिवार्य (2) ऐच्छिक। अनिवार्य वे हैं जो संवैधानिक हैं और ऐच्छिक वे हैं जिन्हें पूर्ण रूप से राज्यों के विवेक पर छोड़ दिया है। इसी से सम्बन्धित धारा 243 जी के अनुसार "राज्य के विधान मंडल विधि द्वारा पंचायतों को ऐसी शक्तियां और अधिकार प्रदान कर सकेंगे जो उन्हें स्वायत्त शासन की संस्थाओं के रूप में कार्य करने योग्य बनाने के लिए आवश्यक समझें...." अब प्रश्न उठता है कि स्वायत्त शासन की संस्थाएं हम किसे कहेंगे अर्थात इसका क्या अर्थ है। किस संस्था को स्वायत्त शासन की संस्था कहेंगे। यह तीन बातों पर निर्भर है। (1) संस्थागत अस्तित्व। इसका अर्थ है कि निर्णय जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा किया जाना चाहिए (2) संस्थागत क्षमता : इसका अर्थ है कि नियम व कानून आदि बनाने का अधिकार संस्था को ही हो। (3) वित्तीय जवाबदेही। इसका अर्थ है जितने कार्यकलाप संस्था को दिये गये हैं उनको कार्यान्वित करने के पर्याप्त साधन भी संस्था के पास हों।

अतः संविधान संशोधन में इन संस्थाओं को स्वायत्त शासन की संस्थाएं बनाना या न बनाना यह राज्यों पर छोड़ा गया है। पिछले दो वर्षों के दौरान इस क्षेत्र में क्या क्या हुआ है, विभिन्न राज्यों ने पंचायतों को स्वायत्त शासन की संस्थाएं बनाने के लिए क्या-क्या कदम उठाये हैं, इसी का विश्लेषण इस लेख में किया गया है।

विभिन्न राज्यों के पंचायत अधिनियमों का अध्ययन

लगभग 50 प्रतिशत से अधिक राज्यों ने अपने पंचायत अधिनियमों को समय सीमा (24 अप्रैल 1994) की समाप्ति के मात्र एक या दो दिन पहले ही पास किया जबकि उन्हें इन्हें पास करने के लिए पूरा एक वर्ष का समय दिया गया था। इससे जाहिर होता है कि राज्यों में विकेन्द्रीकरण के प्रति ज्यादा उत्सुकता नहीं है। इस लेख में हम राज्यों द्वारा पारित पंचायत अधिनियमों का विश्लेषण करने पर देखेंगे कि राज्यों ने पंचायतों को स्वायत्त शासन की संस्थाएं बनाने में कितनी रुचि दिखाई है।

विभिन्न राज्यों के अधिनियमों की प्रस्तावना और उद्देश्यों में पंचायतों को स्वायत्त शासन की संस्थाएं बनाने के बजाए इन्हें ग्रामीण स्तर पर अच्छी तरह प्रशासन करने और ग्रामीण विकास के कार्यक्रमों को अच्छी तरह लागू करने की एक एजेंसी मात्र बनाने से है। अपवाद के तौर पर कुछ राज्य जैसे पंजाब और बिहार में अधिनियमों की प्रस्तावना में स्वायत्त शासन की संस्थायें बनाने की बात कही गई है लेकिन पारित अधिनियम की विषयवस्तु यह साबित करती है कि इन राज्यों में भी पंचायत संस्थाएं केवल एजेंसी मात्र हैं।

73वें संविधान संशोधन के बाद विभिन्न राज्यों ने अपने-अपने पंचायती राज कानूनों को संशोधित किया है जिन्हें देखने से पता चलता है कि अफसरशाही को जनता के प्रतिनिधियों से कहीं अधिक अधिकार प्रदान किए गए हैं। कुछ राज्यों के उदाहरण इसको साबित करते हैं। आन्ध्र प्रदेश पंचायत अधिनियम के अनुसार मंडल आयुक्त तथा जिलाधीश जिला पंचायत तथा ग्राम पंचायतों द्वारा पास किए गए प्रस्तावों को खारिज कर सकते हैं। तीनों स्तरों की पंचायतों के अध्यक्षों को निलम्बित कर सकते हैं। इस प्रकार बिहार पंचायत अधिनियम के अनुसार अधिकारी वर्ग और सरकार को अधिक अधिकार दिये गये हैं। त्यागपत्र के संदर्भ में अधिनियम में कहा गया है कि मुखिया, ब्लाक प्रमुख तथा जिला प्रमुख अपना अपना त्याग-पत्र क्रमशः पंचायत अधिकारी, एस. डी. एम. तथा डी. एम. को सौपेंगे जबकि होना चाहिये था कि मुखिया ब्लाक प्रमुख को, ब्लाक प्रमुख जिला प्रमुख को तथा जिला प्रमुख राज्य सरकार को अपना अपना त्याग पत्र देते।

गुजरात पंचायत अधिनियम में पंचायत सेवा संवर्ग जैसे स्वागत योग्य प्रस्ताव सम्मिलित हैं। फिर भी इनमें अधिकारी तंत्र

*रिसर्च फैलो, सामाजिक विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली-29

एवं राज्य सरकार को अधिक अधिकार दिये गये हैं। अध्यक्ष व सदस्यों को हटाने का अधिकार राज्य सरकार के ही पास है।

इसी तरह हरियाणा, पंजाब, केरल, हिमाचल प्रदेश व मध्य प्रदेश में विकेन्द्रीकृत शासन व विकास के महत्वपूर्ण पहलुओं पर अफसरशाही मुख्यतः निदेशक (पंचायत) और राज्य सरकारों के अधिकारियों को अधिकार दिये गये हैं।

कर्नाटक राज्य पंचायत राज संस्थाओं के विकास में अग्रणी था। वहां भी राज्य सरकार ने जल्दबाजी में अप्रैल 1993 को कर्नाटक पंचायती राज अधिनियम प्रस्तुत किया जो 19 मई 1993 को पारित हुआ। इस अधिनियम से पंचायतों को गहरा आघात लगा है। कर्नाटक पंचायत अधिनियम 1983 के अनुसार जिला परिषद का अध्यक्ष जिले के अधिकारियों का निरीक्षण एवं उन पर नियंत्रण करता था जबकि नयी व्यवस्था इसके बिल्कुल विपरीत है। पंचायती राज संस्थाओं के कार्यों के निष्पादन का निरीक्षण और उन पर नियंत्रण का अधिकार अधिकारी तंत्र के पास है। इस प्रकार नया कर्नाटक पंचायत अधिनियम, 1993 अफसर राज को स्थापित करने का एक कदम मात्र है जिससे पंचायतों को राज्य सरकार की एक एजेंसी मात्र बना दिया है।

हालांकि उत्तर प्रदेश पंचायत अधिनियम में कुछ विशेषतायें हैं जैसे क्षेत्र पंचायत व जिला पंचायत स्तर पर निर्वाचित अध्यक्षों के नियंत्रण में नौकरशाही को रखा है लेकिन अधिनियम जल्दबाजी में पास किया गया और विपक्ष की इस मांग को नहीं माना गया कि अधिनियम पर बहस की जाए क्योंकि इसमें अनेक खामियां हैं। राज्य सरकार का जवाब यह था कि 24 अप्रैल 1994 से पहले यह अधिनियम पास करना संवैधानिक जिम्मेदारी है। इस पर बहस बाद में भी हो सकती है। इस प्रकार अधिनिम्म विभिन्न खामियों सहित पास कर दिया गया।

ग्राम सभाएं, पंचायती राज व्यवस्था की दिल और दिमाग हैं क्योंकि ग्राम सभाएं ही ग्राम पंचायत के सदस्यों और अध्यक्ष को चुनने के साथ-साथ पंचायत समिति और जिला पंचायत के सदस्यों को भी चुनेंगी। विभिन्न राज्यों के पंचायत अधिनियमों के अध्ययन से पता चलता है कि हरियाणा, पंजाब व बिहार को छोड़कर अन्य राज्यों में इस संस्था को पंचायत के विभिन्न कार्यों जैसे बजट आदि को अनुमोदित करने का अधिकार प्राप्त नहीं है। इस संस्था की सिफारिशों को मानना इसकी कार्यकारिणी (पंचायत) के लिए अनिवार्य नहीं है।

जिला योजना समिति बनाने का प्रावधान गुजरात, आंध्र प्रदेश और मध्य प्रदेश को छोड़कर सभी राज्यों के पंचायती राज अधिनियम में रखा गया है। लेकिन समिति का गठन कैसे होगा, इसके कौन-कौन सदस्य होंगे, कौन इसका सचिव होगा, कौन अध्यक्ष होगा, यह सब अधिनियम में नहीं बताया गया है। हां यह कह दिया है कि जैसा कि निर्धारित किया जायेगा। इसमें अपवाद अगर है तो राजस्थान और बिहार राज्य हैं जहां पर इस समिति का अध्यक्ष जिला पंचायत के अध्यक्ष को ही बनाया गया है, जो उचित भी है क्योंकि जिला परिषद का अध्यक्ष अधिक जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करता है। कई राज्यों में इस समिति के अध्यक्ष के बारे में स्पष्ट रूप से निर्धारित नहीं किया जाना यह सन्देह पैदा करता है कहीं राज्य सरकार किसी मंत्री को इसका अध्यक्ष न बना दे जैसा कि इस समय भी उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र आदि में प्रचलन है।

अकेले गुजरात को छोड़कर सभी राज्यों के पंचायती राज अधिनियमों में सांसदों व विधायकों को मध्यस्तर (पंचायत समिति) व उच्च स्तर (जिला पंचायत) पर सदस्यता प्रदान की गई है। सदस्यता ही नहीं बल्कि उन्हें इन संस्थाओं में विभिन्न निर्णय लेने में मत देने का अधिकार भी दिया गया है। यह सब वास्तव में विकेन्द्रीकरण की भावना के प्रतिकूल है। इन नेताओं का वास्तव में स्थान संसद और विधान सभाओं में है। इन्हें पंचायतों में सदस्यता देना इन संस्थाओं को कमजोर करना है।

बिहार व गुजरात राज्य को छोड़कर अन्य राज्यों में वितरण का कार्डिनल सिद्धांत विभिन्न कार्यों को विभिन्न स्तर पर बंटवारे के लिए नहीं अपनाया गया है। कार्डिनल सिद्धान्त का अर्थ है कि जो कार्य जिस स्तर पर किया जाना हो उसे केवल उसी स्तर पर होना चाहिये। अन्य स्तर पर नहीं होना चाहिये। कुछ राज्यों जैसे मध्य प्रदेश और हिमाचल प्रदेश ने तो 73वें संविधान संशोधन की 11वीं सूची के 29 विषयों को अधिनियम में दे दिया है और इनमें से क्या-क्या किस स्तर पर दिया जाये यह सब राज्य सरकार पर छोड़ दिया है। कई विषय ऐसे हैं जो पंचायतों के तीनों स्तर पर आवंटित कर दिये गये हैं लेकिन उन विषयों का प्रत्येक स्तर का कार्यक्षेत्र क्या होगा यह निर्धारित नहीं किया है। उदाहरण के लिए प्राथमिक और उच्चतर माध्यमिक शिक्षा को तीनों स्तरों पर आवंटित किया है। लेकिन किस स्तर की जिम्मेदारी निरीक्षण करने की, किस स्तर की नियम लागू करने की और किस स्तर की शिक्षा के महत्व के बारे में लोगों को जानकारी देने की होगी,

यह तय नहीं किया गया है।

73वें संविधान संशोधन के अनुसार अन्य पिछड़े वर्गों के लिए कितना आरक्षण किया जाए यह राज्य स्तर पर छोड़ दिया है। इसमें केरल और तमिलनाडु को छोड़कर सभी राज्यों के पंचायत अधिनियमों में इन वर्गों को आरक्षण का प्रावधान किया गया है। लेकिन आरक्षण में विभिन्नता है। कहीं पर 27 प्रतिशत है तो कहीं पर कम या अधिक है।

लोगों को गांव में ही न्याय देना तथा छुटपुट झगड़ों का गांव स्तर पर निबटारा करने के लिए न्याय पंचायत की बड़ी अहम भूमिका है। कुछ राज्यों के पंचायत अधिनियमों में न्याय पंचायत का प्रावधान है। ये राज्य हैं बिहार, उत्तर प्रदेश, पंजाब व हिमाचल प्रदेश। हरियाणा और कर्नाटक में नये संशोधन (73वें संशोधन) के बाद न्याय पंचायत का प्रावधान हटा दिया गया है। लेकिन जिन राज्यों में न्याय पंचायत का प्रावधान है भी, वहां भी यह राज्य सरकार के विवेक पर निर्भर करता है। इसलिए न्याय पंचायतें भी ग्राम पंचायतों की तरह कार्य करें इसके लिए संविधान में संशोधन की आवश्यकता है।

विभिन्न राज्यों में पंचायतों का वर्तमान स्तर

73वें संविधान संशोधन के बाद सभी राज्यों ने इस संशोधन को ध्यान में रखकर अपने-अपने पंचायत अधिनियमों में संशोधन किया है। अब यह भी देखना महत्वपूर्ण है कि पिछले दो वर्षों में पंचायतों के विकास के लिये विभिन्न राज्यों ने क्या-क्या कदम उठाये हैं।

अभी तक लगभग सभी राज्यों में पंचायत वित्त आयोग व पंचायत निर्वाचन आयोग की स्थापना हो चुकी है। लेकिन अभी तक किसी भी वित्त आयोग ने रिपोर्ट नहीं दी है। हां पिछले वर्ष योजना आयोग ने राज्य वित्त आयोगों का सम्मेलन आयोजित किया था जिसमें विभिन्न राज्यों के आयोगों के अध्यक्षों व सचिवों ने भाग लिया था। उसमें पता चला था कि इस ओर कोई खास प्रगति नहीं हुई है, वे अभी तक प्रारम्भिक स्थिति में ही हैं।

अभी तक पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश, राजस्थान, हरियाणा, पंजाब, कर्नाटक (ग्राम स्तर तक) और त्रिपुरा राज्यों में पंचायत अधिनियम लागू हो गया है क्योंकि यहां पर पंचायतों के चुनाव हो गये हैं।

अन्य राज्यों में चुनाव नहीं हुए हैं। ये राज्य इस बात का फायदा उठा रहे हैं कि 73वें संविधान संशोधन में पंचायतों का चुनाव कराने की समय-सीमा निर्धारित नहीं की गई है। केवल यह प्रावधान है कि जब पंचायतों का कार्यकाल पांच वर्ष होगा और यदि उन्हें भंग किया जाता है तो छः महीने में दुबारा चुनाव कराना अनिवार्य होगा। इसका अर्थ यह हुआ कि जहां पर चुनाव हो चुके हैं वहां पर संविधान संशोधन लागू हो गया है।

चुनाव के बारे में कुछ राज्य सरकारें विशेष कदम उठा रही हैं। आंध्र प्रदेश में सरकार पंचायत अधिनियम में संशोधन करने जा रही है जिसमें ग्राम पंचायत स्तर पर बिना पार्टी के आधार पर चुनाव होंगे तथा मंडल व जिला स्तर पर राजनैतिक पार्टी के आधार पर चुनाव होंगे। मौजूदा अधिनियम में चुनाव गैर राजनैतिक आधार पर कराने का प्रावधान था। केरल में जैसा कि वहां के मुख्यमंत्री ने कहा है पंचायतों के चुनाव अप्रैल माह में होंगे।

कर्नाटक में भी राज्य सरकार का वर्तमान पंचायत अधिनियम को संशोधित करने का प्रस्ताव है क्योंकि वहां पर वर्तमान अधिनियम के अनुसार अधिक अधिकार लोगों के प्रतिनिधियों के बजाय नौकरशाही को मिले हुए हैं। जैसा कि विदित है यहां चुनाव का मामला आजकल उच्चतम न्यायालय में है। उच्चतम न्यायालय ने राज्य को 31 मार्च 1995 तक चुनाव कराने का समय दे रखा है। उत्तर प्रदेश में पंचायतों के चुनाव की कई बार तिथियां निर्धारित की गईं लेकिन चुनाव नहीं हो सके हैं क्योंकि अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों को लेकर पहले मामला उच्च न्यायालय में और बाद में उच्चतम न्यायालय में दायर किया गया है। लोगों का कहना है कि प्रदेश में पंचायत अधिनियम ने गांव की संरचना को तोड़ा मरोड़ा है और जो 73वें संविधान संशोधन की भावना के अनुरूप नहीं है।

अन्य राज्यों में चुनाव कब होंगे कुछ कहा नहीं जा सकता। आशा की जाती है कि उड़ीसा, बिहार, महाराष्ट्र व गुजरात में विधान सभाओं के चुनावों के बाद तुरन्त पंचायतों के चुनाव कराये जायेंगे। दरअसल सच्चाई यह है कि कोई भी राजनैतिक दल, जो किसी राज्य में सत्ता में है, नहीं चाहता कि विधान सभा के चुनावों से पहले पंचायतों के चुनाव कराये जायें। क्योंकि पंचायतों में यदि उस दल के लोग चुनकर नहीं आये जो सत्ता में है तो विधान सभा के चुनाव में बहुमत हासिल करने में उसे कठिनाई हो सकती है।

(शेष पृष्ठ 20 पर)

पंचायती राज संस्थाओं को सुदृढ़ करने के लिए पहल

सुषमा सिंह*

73वें संविधान संशोधन अधिनियम में जिला, उप जिला और ग्राम स्तर पर स्थानीय स्वशासी पंचायती राज संस्थाओं के जरिये विकेन्द्रित प्रशासन का प्रावधान है। इसमें ग्राम सभा द्वारा सीधे चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा पंचायत का कामकाज चलाये जाने की व्यवस्था है। एक तिहाई स्थान महिलाओं के लिए आरक्षित हैं और अनुसूचित जाति और जनजाति के लोगों के लिए कुल जनसंख्या में उनकी आबादी के अनुपात के अनुसार स्थान आरक्षित हैं। अध्यक्षों के पदों के लिए भी इसी तरह के आरक्षण की व्यवस्था है। इन्हीं प्रावधानों के फलस्वरूप सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े इन लोगों को आगे आने का मौका मिलेगा जो आज तक किसी कानून या आंदोलन से नहीं मिला है। उन्हें इस कानून के प्रावधानों का पूरा फायदा उठाना चाहिए और इसे कुशलतापूर्वक उपयोग करना चाहिए।

इस संविधान संशोधन के अंतर्गत पंचायती राज संस्थाओं का कार्यकाल और उनके नियमित रूप से चुनाव करना सुनिश्चित किया गया है। पंचायती राज संस्थाओं का कार्यकाल पांच वर्ष और इस अवधि की समाप्ति से पहले राज्य चुनाव आयोगों के निरीक्षण में चुनाव कराने तथा जनादेश प्राप्त करने का प्रावधान है।

पंचायतों को अपने संसाधनों का प्रबंध करना होगा। उन्हें आर्थिक विकास तथा सामाजिक न्याय के लिए योजनाएं बनानी होंगी और उन पर अमल करना होगा तभी वे स्वशासन की वास्तविक संस्था बन सकेंगी। लेकिन बहुत कुछ पंचायती राज संस्थाओं को दिए दायित्वों और उन्हें सौंपे गये कोष पर निर्भर करेगा। बहुत कुछ इस बात पर भी निर्भर करेगा कि निर्वाचित प्रतिनिधि इन संसाधनों का लोगों के लाभ के लिए किस प्रकार इस्तेमाल करते हैं और कितनी कुशलता से वे अपने दायित्वों को निबाहते हैं। इसके अलावा ग्राम सभाएं भी कितनी सजग और सक्रिय रहती हैं, इस पर भी बहुत कुछ निर्भर करेगा।

पंचायत चुनाव–वर्तमान स्थिति

संविधान संशोधन जहां भी लागू किया गया है ऐसे सभी राज्यों और केन्द्रों शासित प्रदेशों ने या तो निर्धारित तारीख 23 अप्रैल 1994 तक इसके अनुरूप कानून बनाया है या वर्तमान कानून में संशोधन किया है। नये कानून के अंतर्गत पंचायतों के गठन के लिए कुछ राज्यों में अब भी चुनाव कराये जाने बाकी हैं। अरुणाचल प्रदेश, महाराष्ट्र, असम और सिक्किम में पंचायती राज संस्थाओं को अनुच्छेद 243 एन के अंतर्गत संरक्षण दिया गया है। इसी तरह उड़ीसा और हिमाचल प्रदेश में ग्राम पंचायतों और पंचायत समितियों को तथा मणिपुर और गोवा में ग्राम पंचायतों को संरक्षण दिया गया है। पश्चिम बंगाल में भी सभी स्तरों पर ग्राम पंचायतें कार्यरत हैं। त्रिपुरा और मध्य प्रदेश जैसे राज्यों में नयी पंचायती राज संस्थाओं के गठन के लिए पंचायत चुनाव सभी स्तरों पर कराये गये हैं। पंजाब ने 1993 में ग्राम पंचायतों के चुनाव कराये और सितम्बर 1994 में पंचायत समितियों और जिला परिषदों के चुनाव कराये। हरियाणा और राजस्थान ने क्रमशः दिसम्बर 1994 और जनवरी 1995 में अपने यहां चुनाव कराये। कर्नाटक ने भी मार्च 1995 में पंचायत समितियों और जिला परिषदों के चुनाव कराए। वहां ग्राम पंचायतों के चुनाव दिसम्बर 1993 में कराये गये थे। आंध्र प्रदेश में भी मार्च 1995 में जिला परिषदों और मंडल पंचायतों के चुनाव कराये गये हैं। केन्द्र शासित प्रदेश अण्डमान निकोबार द्वीप समूह, दादरा नगर हवेली तथा दमन और दीव में 1990 में ग्राम पंचायत चुनाव कराये गये। अभी उन्हें जिला परिषदों का गठन करना है। बिहार, गुजरात, केरल, तमिलनाडु और उत्तर प्रदेश में पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव कराये जाने हैं। गोवा, हिमाचल प्रदेश, मणिपुर और उड़ीसा में केवल जिला परिषदों के चुनाव अभी कराये जाने बाकी हैं। चण्डीगढ़, लक्षद्वीप और पांडिचेरी में भी चुनाव कराये जाने हैं। तालिका एक पर नजर डालने से स्थिति स्पष्ट हो जाती है।

*लेखिका ग्रामीण क्षेत्र और रोजगार मंत्रालय में संयुक्त सचिव हैं

पच्चीस लाख सदस्य

संविधान के प्रावधान के अनुरूप पंचायती राज संस्थाएं देश में हर समय सत्ता में होनी चाहिए। इसलिए जितनी जल्दी प्रक्रिया सम्बंधी औपचारिकतायें पूरी हो जाती हैं, इन पंचायतों के गठन के लिए चुनाव कराने चाहिए। चुनाव कराने के सवाल पर केन्द्रीय सरकार संबद्ध राज्यों के साथ लगातार संपर्क बनाये हुए है कि यथाशीघ्र चुनाव कराये जायें। आशा की जाती है कि जिन राज्यों और केन्द्र शासित प्रदेशों में चुनाव कराये जाने हैं वहां अगले कुछ महीनों के अंदर पंचायतें बना ली जायेंगी। सभी राज्यों और केन्द्रशासित प्रदेशों में चुनाव सम्पन्न हो जाने पर करीब 25 लाख निर्वाचित प्रतिनिधियों के पदासीन होने आशा है। इन पंचायतों में एक तिहाई महिला सदस्य होंगी और अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों को कुल आबादी में उनकी आबादी के अनुपात में प्रतिनिधित्व प्राप्त होगा।

तालिका-1

राज्यों और केन्द्रशासित प्रदेशों में पंचायती राज चुनावों की प्रगति

क्रम सं.	राज्य	पिछले चुनाव हुए			चुनाव कराए जाने हैं
		ग्राम पंचायत	पंचायत समिति	जिला परिषद	
1	2	3	4	5	6
1.	आन्ध्र प्रदेश	1988	1995	1995	ग्राम पंचायत के लिए
2.	अरुणाचल प्रदेश	1992	1992	1992	नहीं
3.	असम	1992	1992	1992	नहीं
4.	बिहार	1978	1979	1980	होने हैं
5.	गोवा	1991			जिला परिषद के होने हैं
6.	गुजरात	1988	1988	1988	होने हैं
7.	हरियाणा	1994	1994	1994	नहीं
8.	हिमाचल प्रदेश	1991	1992	–	जिला परिषद के होने हैं
9.	जम्मू कश्मीर	–	–	–	पुष्टि नहीं (371 के अंतर्गत)
10.	कर्नाटक	1993	1995	1995	नहीं
11.	केरल	1988	–	–	होने हैं
12.	मध्य प्रदेश	1994	1994	1994	नहीं
13.	महाराष्ट्र	–	1992	1992	नहीं
14.	मणिपुर	1991	–	–	जिला परिषद के लिए होने हैं
15.	मेघालय	संविधान का भाग 9 लागू नहीं			
16.	मिजोरम	संविधान का भाग 9 लागू नहीं			
17.	नगालैंड	संविधान का भाग 9 लागू नहीं			
18.	उड़ीसा	1992	1992	–	जिला परिषद के होने हैं
19.	पंजाब	1993	1994	1994	नहीं
20.	राजस्थान	1995	1995	1995	नहीं
21.	सिक्किम	1993	–	1993	नहीं
22.	तमिलनाडु	1986	1986	1986	होने हैं
23.	त्रिपुरा	1994	1994	1994	नहीं
24.	उत्तर प्रदेश	88-89	88-89	88-89	चुनाव अधिघोषित
25.	पश्चिम बंगाल	1993	1993	1993	नहीं

1	2	3	4	5	6
केन्द्र शासित प्रदेश					
1.	अंडमान निकोबार द्वीप समूह	1990			पंचायत समिति और जिला परिषद के लिए होने हैं।
2.	चंडीगढ़	1983			ग्राम पंचायत और जिला परिषद के लिए होने हैं।
3.	दादरा व नगर हवेली	1990			जिला परिषद के लिए होने हैं।
4.	दिल्ली	–			
5.	दमण व दीव	1990			जिला परिषद के लिए होने हैं।
6.	लक्षद्वीप	–			ग्राम पंचायत और जिला परिषद के लिए होने हैं।
7.	पांडिचेरी	–			ग्राम पंचायत और जिला परिषद के लिए होने हैं।

प्रशिक्षण उच्च प्राथमिकता

पंचायती राज संस्थाओं को आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए ग्यारहवीं अनुसूची में शामिल 29 विषयों सहित विभिन्न विषयों पर योजनाएं बनाने और उन्हें लागू करने, निर्वाचित प्रतिनिधियों में जागरूकता पैदा करने और उन्हें जानकारी देने की जो खास जिम्मेदारी सौंपी गई है, यह बड़ी महत्वपूर्ण बात है। ग्रामीण क्षेत्र और रोजगार मंत्रालय प्रशिक्षण और सूचना के प्रसार को उच्च प्राथमिकता देता है। ट्रेनर्स यानी प्रशिक्षण देने वाले व्यक्तियों को प्रशिक्षण देने के कार्यक्रमों के संचालन के लिए तीन विख्यात राष्ट्रीय संस्थाओं को चुना गया है। ये संस्थाएं हैं :–राष्ट्रीय ग्रामीण विकास संस्थान (एन.आई.आर.डी.) हैदराबाद, लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय प्रशासन अकादमी, मसूरी और भारतीय लोक प्रशासन संस्थान, नई दिल्ली। संभावित ट्रेनरों को राज्यों द्वारा चुना जाता है और इनमें से किसी एक संस्थान में प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद वे राज्य, जिला तथा उपजिला स्तर पर पंचायती राज के पदाधिकारियों, सरकारी कर्मचारियों तथा गैर सरकारी कर्मचारियों को प्रशिक्षण देते हैं। पंचायत प्रतिनिधियों के विभिन्न स्तरों के प्रशिक्षण के लिए छह प्रशिक्षण कार्यक्रम तैयार किए गए हैं और उन्हें मार्ग निर्देश के लिए सभी राज्यों को भेजा गया है। वास्तव में मंत्रालय नये प्रबंधों के बारे में पंचायती राज के पदाधिकारियों को प्रशिक्षण देने तथा जागरूकता पैदा करने के लिए राज्यों को आर्थिक सहायता भी देता है। राज्यों ने पंचायती राज पदाधिकारियों–निर्वाचित प्रतिनिधियों तथा अधिकारियों–के लिए व्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रम तैयार किये हैं ताकि उन्हें आवश्यक जानकारी देकर अपने संवैधानिक उत्तरदायित्वों को सही तरह से निभाने के लिए कुशल बनाया जा सके। मध्य प्रदेश, कर्नाटक, उड़ीसा, हरियाणा, पश्चिम बंगाल, असम, त्रिपुरा, पंजाब, राजस्थान, सिक्किम जैसे राज्यों ने पंचायती राज के पदाधिकारियों और कार्यकर्ताओं के लिए व्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रम तैयार किये हैं। निम्नलिखित तालिका (तालिका-2) में राज्यों में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे प्रशिक्षणार्थियों की संख्या के बारे में जानकारी दी गई है।

तालिका-2

प्रशिक्षणरत व्यक्तियों की संख्या

		प्रशिक्षणार्थियों की संख्या		
क्रम सं.	**राज्य का नाम**	**ग्राम स्तर**	**मध्य स्तर**	**जिला स्तर**
1.	असम	4,972	392	86
2.	हरियाणा	कुल–53,239		
3.	कर्नाटक	कुल–80,000		
4.	केरल	1,120	280	105
5.	मध्य प्रदेश	92,772	10,472	1,100
6.	उड़ीसा	कुल–85,000		
7.	राजस्थान		9,173	60
8.	सिक्किम	828	–	60
9.	त्रिपुरा	कुल–10,000		
10.	उत्तर प्रदेश	4,43,622	13,355	2,070
11.	पश्चिम बंगाल	19,830	5,085	450

मंत्रालय ग्रामीण विकास की राज्य संस्थाओं, पंचायत प्रशिक्षण संस्थाओं, विस्तार प्रशिक्षण केन्द्रों आदि को सुदृढ़ बनाने के लिए भी सहायता प्रदान करता है।

शक्ति का माध्यम

हालांकि संस्थागत प्रशिक्षण की अपनी सीमायें होती हैं फिर भी यह महत्वपूर्ण है क्योंकि पंचायती राज संस्थाओं की सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि ये लोकतांत्रिक संस्थायें किस तरह

अपना कामकाज करती हैं। प्रशिक्षण से जानकारी मिलती है, योजना तैयार करने और लागू करने के कौशल का विकास होता है और कार्यक्रमों पर निगरानी रखने की योग्यता विकसित होती है। जब तक ऐसा नहीं होता पंचायतों को दिये गये साधनों और शक्तियों का सही इस्तेमाल नहीं हो पायेगा। पंचायती राज संस्थाओं के सदस्यों/अधिकारियों को सामाजिक जागृति लाने के मामले में अपनी भूमिका के प्रति सजग होना चाहिये। प्रशिक्षण इस तरह का दिया जाना चाहिये कि अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और महिलाओं को अधिकार देने की प्रक्रिया में सुविधा हो सके क्योंकि इनमें से सम्भवतः अधिकतर ऐसे होंगे जो पहली बार सार्वजनिक जीवन में प्रवेश कर रहे होंगे। चुनावों और आरक्षणों से वे स्वतः सजग नहीं हो जायेंगे और पंचायती राज संस्थाओं में प्रवेश मात्र से उनको ताकत नहीं मिल जायेगी क्योंकि यह अपने आप में कोई लक्ष्य नहीं है बल्कि शक्ति या अधिकार प्राप्त करने का एक माध्यम है जिसका अपने उद्देश्यों के लिए सूझबूझ के साथ कुशलतापूर्वक इस्तेमाल किया जाना चाहिये। ग्रामीण क्षेत्र और रोजगार मंत्रालय गैर सरकारी संगठनों को या तो सीधे या लोक कार्यक्रम तथा ग्रामीण प्रौद्योगिकी विकास परिषद यानि कापार्ट के माध्यम से समर्थन दे रहा है और पंचायती राज संस्थाओं के सबसे निचले स्तर के प्रतिनिधियों, महिलाओं या अनुसूचित जाति और जनजाति के लोगों को प्रशिक्षण के उद्देश्य से गैर सरकारी संगठनों को सहयोग प्रदान करता है।

दूरवर्ती शिक्षा कार्यक्रम

सरकार ने महसूस किया है कि पंचायतीराज संस्थाओं के प्रतिनिधियों को प्रशिक्षण देना एक चुनौती भरा कार्य है इसलिये वह प्रशिक्षण तथा जागरूकता लाने के नये-नये तरीके उपयोग में लाने की कोशिश करती रही है। इंदिरा गांधी राष्ट्रीय खुला विश्वविद्यालय के सहयोग से ग्रामीण क्षेत्र और रोजगार मंत्रालय बहु-माध्यम दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम का विकास कर रहा है। इसमें लिखित सामग्री तथा वीडियो और आडियो उपकरणों की सहायता से स्वयं शिक्षा प्राप्त करने के लिये प्रशिक्षण सामग्री दी जायेगी।

ग्राम सभा और लोक सहभागिता

ग्राम सभा के उल्लेख के बिना अधिकार देने के बारे में कोई भी विचार विमर्श अधूरा है क्योंकि ग्राम सभा ही एक ऐसा आधार है जिस पर पंचायती राज संस्थाओं का पिरामिड ठहरा हुआ है। पंचायती राज संस्थायें ग्राम सभा का ही प्रतिनिधित्व करती हैं, वे उन्हीं की आवश्यकताओं के प्रति उत्तरदायी होती हैं इसलिये उन्हीं के प्रति उनकी जवाबदेही होती है। बदले में ग्राम सभा को पंचायती राज संस्थाओं के सामान्य कामकाज के बारे में चौकस रहना चाहिये क्योंकि ग्राम सभा की भागीदारी के बिना पंचायती राज संस्थायें सफल नहीं हो सकतीं। ग्राम सभा का कार्य संचालन करने योग्य तथा सहभागी बनाने के लिए उनकी ओर ज्यादा ध्यान देना होगा। ग्राम सभा एक ऐसा मंच है जहां गांव के लोग अपने मामलों का प्रबन्ध करने के लिये सीधे भागीदार बन सकते हैं।

सत्ता सौंपना

अंततः संसाधनों, सत्ता और अधिकार पर नियंत्रण के साथ-साथ प्रशासनिक उपायों और कोषों से पंचायती राज संस्थायें मजबूत होंगी और लोगों की आवश्यकताओं के प्रति उत्तरदायी बनेंगी। राज्य विधानमंडल पंचायती राज संस्थाओं को और अधिक अधिकार तथा दायित्व देने के लिए आधार उपलब्ध करेंगे। इसके अनुसार महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश, हरियाणा, त्रिपुरा और पंजाब जैसे राज्यों में पंचायती राज संस्थाओं को सत्ता सौंपने और दायित्व देने की एक योजना भी तैयार की गई है ताकि वे आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिये योजनाएं तैयार कर सकें और उन पर अमल कर सकें। राज्य सरकारें पंचायतीराज संस्थाओं की प्रशासनिक और वित्तीय व्यवस्था को मजूबत करने के लिये भी उपाय कर रही हैं। ग्रामीण क्षेत्र और रोजगार मंत्रालय ने पंचायती राज संस्थाओं को अधिकार और दायित्व सौंपने के लिये सुझावपूर्ण ढांचा तैयार किया है। इस ढांचे को पंचायत मंत्रियों की राष्ट्रीय समिति के सामने रखा गया है जिसमें सभी राज्यों से टिप्पणियां मांगी गई है। सिद्धान्त रूप में समिति ने ढांचे का अनुमोदन कर दिया है और कहा है कि उसे विचार तथा मार्ग निर्देश के लिये सभी राज्यों को भेजा जाए। पंचायतें धीरे-धीरे विकसित होंगी और वे दिनों दिन मजबूत होती जायेंगी लेकिन विभिन्न राज्यों को क्या व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाना होगा उस पर ध्यान देना आवश्यक है ताकि पंचायती राज संस्थाओं को कार्य संचालन के योग्य बनाया जाए। सिद्धांत यह है कि पंचायतीराज संस्थाओं को अधिकार सौंपे जाएं और त्रिस्तरीय ढांचे के स्तर को ध्यान में रखते हुये इस बात का प्रयास किया जाए कि व्यावहारिक रूप में क्या कुछ किया जा सकता है। वही मार्ग निर्देशक सिद्धान्त होगा। विकास, आर्थिक कल्याण, सामाजिक न्याय जैसे क्षेत्रों में स्थानीय स्तर के कार्यों तथा स्थानीय सेवा कार्यों को अवश्य ही पंचायती राज संस्थाओं को सौंपा जाना चाहिए। वास्तव में जवाहर रोजगार योजना एक उत्कृष्ट उदाहरण है जिनके जरिये कार्यान्वयन के लिये आवश्यक अधिकार देने के साथ पंचायतीराज संस्थाओं को पर्याप्त धन राशि दी जा सकती है।

राज्य वित्त आयोग

राज्य वित्त आयोगों को स्थापित करने का प्रावधान संवैधानिक संशोधन अधिनियम में ऐतिहासिक प्रावधान है। राज्य वित्त आयोगों की सिफारिशें पंचायती राज संस्थाओं के काम-काज पर गंभीर असर डालेंगी क्योंकि बिना संसाधनों के सबसे निचले स्तर पर लोकतंत्र का कार्य-संचालन संभव नहीं है। सभी राज्यों और केन्द्र शासित प्रदेशों से आशा की जाती है कि वे राज्य वित्त आयोग का गठन करें और अनेक राज्य सरकारों ने इस जरूरत के अनुरूप कदम उठाये भी हैं। संवैधानिक संशोधन के प्रावधानों के अनुसार राज्य वित्त आयोगों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे राज्यों और पंचायती राज संस्थाओं के बीच करों, शुल्कों, चुंगीकरों और अन्य शुल्कों के वितरण के बारे में सिद्धांत निर्धारित करें तथा राज्यों की संचित निधि से पंचायतों को अनुदान सहायता उपलब्ध कराने तथा पंचायतों की वित्तीय स्थिति में सुधार लाने के लिए अन्य उपायों के सुझाव दें। राज्य वित्त आयोगों के लिए यह महत्वपूर्ण अवसर है कि वह पंचायती राज संस्थाओं की समता, कार्य कुशलता और स्वायत्ता के उद्देश्यों को पूरा करना सुनिश्चित करें। राज्य के राज्यपाल को आयोग द्वारा की गई सिफारिशों को उस पर की गई कार्रवाई के विस्तृत ज्ञापन के साथ राज्य विधान मण्डल में प्रस्तुत करना होगा।

राज्य वित्त आयोगों को समर्थन

ग्रामीण क्षेत्र और रोजगार मंत्रालय की पहल पर एक राज्य वित्त आयोग प्रकोष्ठ दिल्ली स्थित राष्ट्रीय लोक वित्त एवं नीति संस्थान में स्थापित किया गया है जो राज्य वित्त आयोगों को सौंपे जाने वाले कार्यों के बारे में मार्ग निर्देश तैयार करेगा और पंचायत वित्त के विभिन्न पहलुओं पर विशेष अध्ययनों समेत उनके कामकाज के विभिन्न मुद्दों पर अपने विचार देगा। यह प्रकोष्ठ सूचना के प्रसार के लिये पंचायत आंकड़ा बैंक का विकास करेगा और पंचायत वित्त के खास पहलुओं के बारे में अध्ययन करेगा तथा राज्य वित्त आयोगों को तकनीकी सलाह या सहायता देगा। नगरीय वित्तों के बारे में यह संस्थान राष्ट्रीय शहरी कार्य संस्थान (एन. आई.पी.एफ.पी.) तथा पंचायती वित्त के लिए एन.आई. आर.डी. के साथ सहयोग कर रहा है जहां विशेष प्रकोष्ठ स्थापित किये गये हैं। सलाह और मार्ग निर्देश के लिये एक संसाधन ग्रुप (रिसोर्स ग्रुप) का गठन भी किया गया है।

धन राशियों का हस्तांतरण : सुव्यवस्थित प्रणाली की आवश्यकता

चूंकि सामान्य दृष्टिकोण न तो सम्भव है और न ही आवश्यक इसलिये राज्य वित्त आयोगों को अच्छे सिद्धान्तों पर आधारित कोषों के हस्तांतरण की प्रणाली का सुझाव देना होगा। निः संदेह राज्य वित्त आयोग इस मसले पर अपने स्पष्ट दृष्टिकोण से कार्य करना पसंद करेंगे। पंचायती राज संस्थाओं पर विकास कार्यों और कार्यक्रमों की भारी जिम्मेदारी होती है और उनमें से अधिकतर कार्यक्रम समयबद्ध होते हैं। अतः उनका कामकाज विकास कोषों और अनुदान सहायता की उपलब्धता पर निर्भर करेगा। राज्य वित्त आयोगों को ऐसे उपायों का सुझाव देना चाहिए जिनके आधार पर प्राप्त होने वाली राशि का अनुमान पहले से लगाया जा सके और राशि नियमित रूप से प्राप्त हो। पंचायती राज संस्थाओं को अपने कर लगाने और उनकी वसूली करने का अधिकार भी होना चाहिए। अपने संसाधन जुटाने और उनका प्रबन्ध करने से स्थानीय स्वशासन की अवधारणा मजबूत होगी और पंचायती राज संस्थायें सुदृढ़ होंगी। राज्य वित्त आयोग प्रकोष्ठ ने अब तक राज्य वित्त आयोगों के अध्यक्षों तथा सदस्यों की दो कार्यशालाओं का आयोजन किया है और ऐसे व्यापक दृष्टिकोण पर अवधारणा पत्रों को तैयार किया है जिसे राज्य वित्त आयोग अपना सकें। न्यूनतम मानकों की पहचान, बुनियादी न्यूनतम आवश्यकताओं तथा सेवाओं की पहचान, संसाधनों की पहचान, पंचायतों के लिये हस्तांतरित किये गये मामलों के बारे में अध्ययन प्रारूपों को तैयार करने, आंकड़ों का आधार तैयार करने और सूचना के प्रसार के लिये एक माध्यम के रूप में सेवा करने के बारे में आवश्यक पत्र भी तैयार किये गये हैं।

अन्य उपाय

ग्रामीण क्षेत्र और रोजगार मंत्रालय ने कुछ अन्य पहल भी की हैं। संसद सदस्य श्री दलीप सिंह भूरिया की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया गया है जिसमें मुख्य रूप से अनुसूचित क्षेत्रों के सांसदों और विशेषज्ञों को शामिल किया गया है। समिति ने संविधान (73वां संशोधन) अधिनियम 1992 के प्रावधानों को अनुसूचित क्षेत्रों में लागू करने के सम्बन्ध में सिफारिशें करनी थीं। समिति ने अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत कर दी है जिस पर सरकार विचार कर रही है।

राज्यों के पंचायती राज संस्थाओं संबंधी कानूनों की बुनियादी विशेषताओं का प्रारंभिक अध्ययन किया गया है और यह महसूस किया गया है कि इन कानूनों का और अधिक व्यापक अध्ययन करने की आवश्यकता है। सरकार ने भारतीय लोक प्रशासन संस्थान, नई दिल्ली को यह काम सौंपा है।

पंचायती राज राज्यों का विषय है और राज्य सरकारें ही अंततः पंचायती कानून को लागू करेंगी। राज्यों के पंचायत मंत्रियों और पंचायत प्रभारी सचिवों के तीन जुलाई 1993 को सम्मेलन में

संविधान संशोधन के प्रावधानों को लागू करने के लिए शीघ्रता से उपाय करने के बारे में महत्वपूर्ण सिफारिशें की गईं। इन सिफारिशों के फलस्वरूप सभी राज्य सही भावना के साथ पंचायती राज कानून पर अमल कर सके हैं।

केन्द्रीय ग्रामीण विकास राज्यमंत्री की अध्यक्षता में पंचायत मंत्रियों की एक राष्ट्रीय समिति का गठन 8 सितम्बर 1993 को किया गया जिसमें सात राज्यों के मंत्री सदस्य के रूप में और तीन विशेष आमंत्रित व्यक्ति के रूप में सम्मलित हुए। समिति संविधान (73 वें संशोधन) अधिनियम, 1992 के अंतर्गत हो रहे कार्य के संबंध में महत्वपूर्ण सुझाव और मार्गनिर्देश देती है।

अनुवाद : रामबिहारी विश्वकर्मा
103 एच, सेक्टर-4,
डी० आई० जेड एरिया,
नई दिल्ली

पंचायती राज संस्थाओं के प्रतिनिधियों के लिए महत्वाकांक्षी प्रशिक्षण कार्यक्रम

सरकार ने पंचायती राज संस्थाओं के नवनिर्वाचित प्रतिनिधियों के प्रशिक्षण के लिए एक महत्वाकांक्षी कार्यक्रम प्रारंभ किया है। ग्रामीण क्षेत्र एवं रोजगार मंत्रालय ने पंचायती राज संस्थाओं के प्रतिनिधियों के प्रशिक्षण से संबंधित विभिन्न पहलुओं पर विचार करने के लिए दो कार्यबलों का गठन किया है।

साक्षरता अभियान के बाद और दूर शिक्षा के लिए माड्युल्स तैयार करने के लिए गठित कार्यबल पंचायती राज संस्थाओं के नवनिर्वाचित प्रतिनिधियों के बीच सूचना के प्रसार के लिए स्व-निर्देशित माड्युल्स तैयार करने के लिए इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के साथ मिलकर कार्य करेगा। इन माड्युलों में लिखित सामग्री के साथ-साथ दृश्य एवं श्रव्य कार्यक्रम भी शामिल हैं जिन्हें टेलीविजन के चैनलों और ग्रामीण क्षेत्रों में संचार के लिए 1997-98 में प्रक्षेपित किए जाने वाले नए उपग्रह "ग्रामसेट" के माध्यम से प्रसारित किया जाएगा।

पंचायती राज को मजबूत करने के उद्देश्य से गठित दूसरे कार्यबल ने महत्वपूर्ण प्रशिक्षण माड्युलों को अंतिम रूप दे दिया है। राष्ट्रीय पंचायत मंत्री समिति द्वारा स्वीकृत माड्युलों को राज्यों को क्रियान्वित करने के लिए भेज दिया गया है।

केन्द्र ने प्रशिक्षकों के व्यापक प्रशिक्षण हेतु बनाए गए कार्यक्रमों के लिए तीन प्रतिष्ठित राष्ट्रीय संस्थानों—हैदराबाद स्थित राष्ट्रीय ग्रामीण विकास संस्थान, मसूरी स्थित लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय प्रशासनिक अकादमी और नई दिल्ली स्थित भारतीय लोक प्रशासन संस्थान को चुना है। पंचायती राज संस्थाओं के अधिकारी एवं गैर-अधिकारी व्यक्तियों को चुन लिया गया है और इनमें से एक संस्थान में उन्हें प्रशिक्षण दिया गया है। वे राज्यों में वापस जाकर पंचायती राज प्रतिनिधियों को प्रशिक्षित करेंगे।

ग्रामीण क्षेत्र एवं रोजगार मंत्रालय स्थानीय निकायों के निर्वाचित प्रतिनिधियों को प्रशिक्षण देने और विकास कार्यक्रमों की जानकारी देने के लिए राज्यों को उनके प्रयासों में सहयोग देने के उद्देश्य से सीमित आर्थिक सहायता भी दे रहा है। समाज के कमजोर वर्गों और महिलाओं को शिक्षित करने से संबंधित कार्यक्रम चलाने के लिए गैर-सरकारी संगठनों को भी चुना गया है। मध्य प्रदेश, कर्नाटक, उड़ीसा, हरियाणा, पश्चिम बंगाल, असम, त्रिपुरा, पंजाब और राजस्थान ने पंचायत प्रतिनिधियों के लिए व्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रारंभ किए हैं।

एक अनुमान के अनुसार यदि देश भर में पंचायत चुनाव हो जाएं तो करीब 25 लाख निर्वाचित प्रतिनिधि होंगे। पहली बार 73वें संविधान संशोधन द्वारा महिलाओं के लिए एक तिहाई आरक्षण और अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों को उनकी जनसंख्या के अनुपात में आरक्षण प्रदान किया गया है। पंचायती राज संस्थाओं में ऐसे प्रतिनिधि बड़ी संख्या में हैं जो पहली बार निर्वाचित होकर आए हैं। ऐसे प्रतिनिधियों को विकास संबंधी कार्यक्रमों की जानकारी देने की आवश्यकता है ताकि वे आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए क्रियान्वित की जा रही विभिन्न योजनाओं में विशिष्ट जिम्मेवारी को निभा सकें।

साभार : पत्र सूचना कार्यालय

पंचायतों को कारगर बनाने की आवश्यकता

✍ सुभाष चन्द्र 'सत्य'

यों तो स्वतंत्रता के बाद के हमारे राष्ट्रीय जीवन की अनेक उल्लेखनीय उपलब्धियां गिनाई जा सकती हैं किन्तु सबसे सुखद और गौरवमयी उपलब्धि के बारे में पूछा जाए तो सहज ही कहा जा सकता है कि अनेक अवरोधों और आसपास के झंझावातों के भीषण झोंकों के बावजूद भारत में 45 वर्ष पहले लोकतंत्र का जो पौधा रोपा गया था वह न केवल स्वस्थ और पुष्ट वृक्ष में बदल चुका है अपितु दीप-स्तम्भ के रूप में विश्व के अन्य देशों में लोकतांत्रिक मूल्यों का प्रकाश भी फैला रहा है। यह दावा करना तो सही नहीं होगा कि हमारा लोकतंत्र आदर्श और एकदम विकाररहित रहा है परंतु यह तो कहा जा सकता है कि समय-समय पर आईं त्रुटियों और दोषों का निराकरण करने की क्षमता हमारी व्यवस्था में अंतर्निहित है और इस दिशा में हमारे अब तक के प्रयास काफी सफल रहे हैं। सच तो यह है कि स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान ही गांधी जी के नेतृत्व में हमारे राष्ट्रीय नेताओं ने लोकतांत्रिक मूल्यों को राष्ट्रीय-जीवन का अंग बनाने की प्रक्रिया प्रारम्भ कर दी थी। इन्हीं प्रयासों के फलस्वरूप स्वतंत्रता-प्राप्ति के पश्चात शासन की पद्धति का चयन करने में हमारे नेताओं को किसी दुविधा का सामना नहीं करना पड़ा और संसदीय लोकतंत्र को राष्ट्रीय सहमति के आधार पर अपना लिया गया। लोकसभा और विधानसभाओं के चुनावों तथा संविधान में निर्धारित अन्य लोकतांत्रिक संस्थाओं के माध्यम से भारतीय लोकतंत्र की गाड़ी निर्विघ्न चलती आ रही है।

लोकतंत्र का बुनियादी चरण पंचायत

गांधी जी मानते थे कि सच्चा लोकतंत्र वही है जो निचले स्तर पर लोगों की भागीदारी पर आधारित हो। आज मतदान के जरिए आम मतदाता राष्ट्रीय और प्रांतीय स्तर पर अपने प्रतिनिधि तो भेज सकते हैं परंतु अपने सामाजिक और आर्थिक स्तर को ऊंचा उठाने के कार्यक्रमों की योजना के निर्माण तथा क्रियान्वयन में उनकी प्रत्यक्ष भागीदारी नहीं होती। यह तभी संभव है जब गांव में रहने वाले आम व्यक्ति को भी शासन के बारे में निर्णय करने का अधिकार मिले। 18 जनवरी 1948 को 'हरिजन' में गांधी जी ने लिखा था "सच्चे लोकतंत्र का परिपालन केन्द्र में बैठे 20 व्यक्तियों द्वारा नहीं हो सकता। इसका क्रियान्वयन प्रत्येक गांव के निवासियों द्वारा ही होना चाहिए। मेरे विचार में जन समर्थन प्राप्त पंचायत को कोई भी कानून कार्य करने से नहीं रोक सकता ...भारत के सच्चे लोकतंत्र की इकाई गांव ही है।"

इसी गांव को देश की वास्तविक बुनियादी प्रतिनिधि इकाई बनाने, गांव के लोगों को राष्ट्र की मुख्यधारा का अंग बनाने तथा उन्हें अपनी इस भूमिका का एहसास कराने के उद्देश्य से ही पंचायती राज की कल्पना की गई। पंचायत प्रणाली प्राचीन काल में भी हमारे देश में प्रचलित थी किन्तु विकास प्रक्रिया की वाहक संस्था के रूप में उसकी आधुनिक कल्पना स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान ही उभरी। संविधान लागू होने के बाद से ही इस कल्पना को साकार रूप देने की दिशा में चिंतन-मनन चलता रहा और पंचायती राज व्यवस्था को राष्ट्रीय जीवन का हिस्सा बनाने के अनेक प्रयास हुए। प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू से लेकर वर्तमान प्रधानमंत्री श्री नरसिम्ह राव तक सभी नेताओं की पंचायती राज व्यवस्था में अटूट निष्ठा रही है। किन्तु क्या पंचायती राज प्रणाली वास्तविक अर्थों में अपनी जड़ें जमा पाई है? इस प्रणाली को सुचारु और प्रभावशाली बनाने की दिशा में स्वर्गीय प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने पहल की और संविधान में संशोधन करके पंचायतों को अधिकार-सम्पन्न बनाने का निश्चय किया। उनकी सरकार ने 25 मई 1989 को संसद में संविधान संशोधन विधेयक प्रस्तुत किया। उस समय कुछ कारणों से यह विधेयक पारित नहीं हो सका। उस अधूरे कार्य को वर्तमान सरकार ने पूरा किया। दिसम्बर 1992 में 73वें संविधान संशोधन को संसद की तथा 20 अप्रैल 1993 को राष्ट्रपति की स्वीकृति के पश्चात 24 अप्रैल 1993 को यह कानून समूचे देश में लागू हो गया।

नए युग का सूत्रपात

इस कानून के लागू होने से भारत में सत्ता के विकेन्द्रीकरण की दिशा में नए युग का सूत्रपात हुआ। इससे निचले स्तर पर लोकतंत्र की स्थापना तथा ग्रामीण स्वराज के सपने को साकार करने का मार्ग प्रशस्त हो गया। इस कानून में जहां गांवों में सत्ता प्रणाली में चली आ रही जड़ता को समाप्त करने के लिए कई क्रांतिकारी प्रावधान जोड़े गए हैं वहां इसे लचीला भी बनाया गया है ताकि स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप मामूली फेर बदल के साथ इसे लागू किया जा सके। पिछले दो वर्षों में पंचायती राज व्यवस्था को सुचारु बनाने की दिशा में हुई प्रगति की समीक्षा से पहले इस कानून की प्रमुख विशेषताओं पर नजर डालना उचित होगा:

- पंचायती राज प्रणाली तीन स्तरों वाली है—ग्राम स्तर, मध्यवर्ती स्तर तथा जिला स्तर। किन्तु इसमें लचीलापन रखा गया है जिसके अंतर्गत बीस लाख से कम जनसंख्या वाले राज्यों को मध्यवर्ती संस्थाएं बनाने या न बनाने के मामले में छूट दी गई है।
- तीनों स्तरों पर चुनाव प्रत्यक्ष चुनाव प्रणाली से होता है। ग्राम पंचायतों के सरपंच, मध्यवर्ती संस्थाओं के सदस्य तथा अध्यक्ष जिला स्तर की पंचायत समितियों के सदस्य बन सकते हैं।
- पंचायतों का कार्यकाल पांच वर्ष रखा गया है और पांच वर्ष पूरे होने पर चुनाव कराना अनिवार्य है। पंचायत भंग किए जाने की स्थिति में छह महीने के अंदर नयी पंचायत को चुनने के लिए चुनाव कराना आवश्यक है।
- पंचायतों के चुनाव के लिए मतदाता सूचियां तैयार करने और चुनाव के संचालन के लिए स्वतंत्र निर्वाचन आयोग की व्यवस्था है।
- सभी पंचायत समितियों में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए उनकी जनसंख्या के अनुरूप सीटें आरक्षित की गई हैं। इसी प्रकार कुल सीटों की एक तिहाई सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित हैं।
- ग्रामीण क्षेत्रों में विकास योजनाएं लागू करने के लिए पंचायतों को पर्याप्त धन उपलब्ध कराने का प्रावधान किया गया है।
- पंचायतों के लिए वित्तीय संसाधनों के निर्धारण पर विचार करने के लिए प्रत्येक राज्य में हर पांच वर्ष बाद वित्त आयोग का गठन किया जाएगा जो राज्य की वित्तीय स्थिति तथा बदली परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए अपनी सिफारिशें देगा।
- राज्यों को अधिकार दिया गया है कि पंचायतों को कर वसूल करने की अनुमति देने अथवा राजस्व का कुछ भाग उन्हें उपलब्ध कराने के संबंध में स्वयं फैसला करें।

इसके अलावा पंचायतों को स्थानीय स्वशासन की सशक्त और अधिकार-संपन्न इकाई बनाने के उद्देश्य से अधिनियम में यह व्यवस्था की गई है कि राज्य विधानमंडल चाहें तो उनके कार्य संचालन के लिए आवश्यक अन्य अधिकार भी प्रदान कर सकते हैं। आर्थिक विकास तथा सामाजिक न्याय से संबंधित कार्यक्रम और योजनाएं तैयार करने के बारे में अधिकार देने पर भी यह प्रावधान लागू होता है।

सभी राज्यों से कहा गया कि केन्द्रीय अधिनियम में किए गए प्रावधानों के अनुरूप अपने-अपने यहां कानून बनाकर वे उन पर अमल शुरू कर दें। सभी राज्यों ने अपने यहां कानून बना लिये हैं।

राज्यों से यह भी कहा गया कि वे नए पंचायती राज कानून की व्यवस्थाओं तथा बारीकियों की जानकारी देने के लिए स्थानीय कार्यकर्त्ताओं, स्वयंसेवी संगठनों के पदाधिकारियों तथा संबंधित सरकारी विभागों के अधिकारियों और कर्मचारियों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करें।

प्रगति के सोपान

अधिनियम लागू होने की दो वर्ष की अवधि में गांवों के सामाजिक और आर्थिक जीवन में पंचायती राज संस्थाओं की जड़ें जमाने की दिशा में उत्साहजनक प्रगति हुई है। मध्यप्रदेश पहला राज्य था जिसने नए अधिनियम के अंतर्गत पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव कराए। लगभग सभी क्षेत्रों में चुनाव शांतिपूर्वक सम्पन्न हुए और पंचायतों में महिला तथा अनुसूचित जातियों व जनजातियों के उम्मीदवार पर्याप्त संख्या में चुन कर आए। इसी प्रकार त्रिपुरा, हरियाणा, पंजाब तथा राजस्थान में भी पंचायतों के चुनाव सम्पन्न हो चुके हैं। कई अन्य राज्यों में चुनाव प्रक्रिया शुरू हो चुकी है। परंतु अभी बहुत से राज्यों में चुनाव नहीं कराए गए हैं जो स्थानीय स्वशासन में लोगों को भागीदार बनाने के प्रयासों की सफलता के लिए शुभ संकेत नहीं है। केन्द्र ने इन राज्यों से शीघ्र ही पंचायती संस्थाओं का दायित्व चुने हुए प्रतिनिधियों को सौंपने का निर्देश दिया है। यही नहीं केन्द्रीय सरकार ने यह भी चेतावनी दी है कि पंचायत चुनावों का काम पूरा न करने वाले राज्यों को ग्रामीण विकास के लिए केन्द्रीय वित्तीय सहायता रोकी जा सकती है। 30 जनवरी 1995 को बलिदान दिवस के सिलसिले में नई दिल्ली में आयोजित एक समारोह को सम्बोधित करते हुए प्रधानमंत्री ने स्पष्ट शब्दों में कहा कि सरकार पंचायती राज की स्थापना के गांधी जी के सपने को साकार करने के लिए पूरी तरह वचनबद्ध है। उन्होंने घोषणा की कि जो राज्य सरकारें अप्रैल 1995 तक पंचायती चुनाव नहीं कराएंगी उन्हें ग्रामीण विकास के लिए केन्द्रीय सहायता रोकी जा सकती है।

परंतु चुनाव संपन्न कराना ही इस व्यवस्था की सफलता की गारंटी नहीं मानी जा सकती। वास्तव में निरंतर राजनीतिक हस्तक्षेप के कारण ग्रामीण क्षेत्रों में ऐसा वातावरण बन चुका है जिसमें पंचायती राज संस्थाओं को अपेक्षित लक्ष्यों के अनुरूप चलाने में कठिनाइयां आती हैं। जाति और वर्ग के आधार पर

गुटबाजी तथा धड़ेबाजी के चलते कई बार सही और सुपात्र व्यक्ति चुनकर नहीं आ पाते। इसी प्रकार अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए यद्यपि आरक्षण की व्यवस्था की गई है परंतु सामाजिक जीवन में भेदभाव की प्रवृत्ति के फलस्वरूप इन वर्गों के प्रतिनिधि विचार-विमर्श तथा कार्यक्रमों के क्रियान्वयन के मामले में प्रभावी भूमिका निभाने में अभी तक सक्षम नहीं हो पाए हैं।

जिन राज्यों में जनजातीय आबादी अधिक है वहां पंचायती राज व्यवस्था लागू करने का काम विशेष रूप से चुनौतीपूर्ण है। जनजातीय क्षेत्रों में 73वें संविधान संशोधन के प्रावधानों के अनुरूप पंचायती संस्थाओं का ढांचा विकसित करने के उद्देश्य से पिछले वर्ष जून में उच्च स्तरीय समिति का गठन किया गया था। संसद सदस्य श्री दलीप सिंह भूरिया की अध्यक्षता में बनाई गई इस समिति में संसद सदस्यों और विशेषज्ञों को रखा गया था। इस समिति ने 3 फरवरी 1995 को अपनी रिपोर्ट प्रधानमंत्री को सौंपी। समिति ने सरकार से कहा है कि जनजातीय क्षेत्रों में पंचायती संस्थाओं को विशेष अधिकार दिए जाने चाहिए। रिपोर्ट में यह भी कहा गया है कि इन क्षेत्रों में जनजातीय लोगों को जमीन से बेदखल किए जाने की समस्या को देखते हुए पंचायतों को विशेष प्रकार के अधिकारों से संपन्न करना आवश्यक है। इसी प्रकार पर्यावरण प्रदूषण, ऋण तथा नशे की लत जैसे पहलुओं से निपटने की दृष्टि से पंचायतों को प्रशासनिक, वित्तीय तथा कानूनी रूप से सशक्त बनाने की सिफारिश की गई है। समिति ने यह भी कहा है कि मध्य भारत के जनजातीय इलाकों में पंचायती राज संस्थाओं को स्वायतशासी परिषद जैसे अधिकार दिए जाने चाहिए। रिपोर्ट स्वीकार करते हुए प्रधानमंत्री ने विचार व्यक्त किया कि पंचायतों को दिए गए अधिकारों को चुनौती नहीं दी जानी चाहिए, वह अपने आप में अंतिम होने चाहिए। उन्होंने कहा कि ग्रामीण संस्थाओं को स्वतंत्र रूप से काम करने दिया जाना चाहिए और उनके रोजमर्रा के कामकाज में हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए।

नए अधिनियम में महिलाओं के लिए एक तिहाई स्थानों तथा अनुसूचित जातियों व जनजातियों के लिए आरक्षित सीटों में से भी एक तिहाई स्थान महिलाओं के लिए आरक्षित करने की व्यवस्था की गई है। परंतु समाज के सत्ताधारी वर्ग ने इस प्रावधान का दुरुपयोग करने के भी तरीके ढूंढ लिए हैं। कुछ राज्यों में हाल में हुए पंचायती चुनावों में कई क्षेत्रों में यह देखा गया कि प्रभावशाली व्यक्ति अपनी ही पत्नी, बहन, मां अथवा किसी अन्य संबंधी महिला को चुनाव में उम्मीदवार बना देते हैं जो बाद में उन्हीं के इशारों पर काम करने को विवश होती है। यह प्रवृत्ति खतरनाक है। इससे एक तो सुपात्र महिला उम्मीदवार चुनकर न आने से विकास और कल्याण कार्यक्रमों की योजना बनाने में महिलाओं के हितों की उपेक्षा होती है और दूसरा उन्हें अधिकार संपन्न बनाने का मूल उद्देश्य ही अधूरा रह जाता है। इसलिए राजनीतिक गुटबंदी तथा कमजोर वर्गों के प्रतिनिधियों को अपनी भूमिका निभाने से वंचित करने की चालों पर अंकुश लगाना अत्यन्त आवश्यक है।

पंचायतों को वित्तीय अधिकार मिलने से वित्तीय संसाधनों के दुरुपयोग की संभावनाएं बढ़ गई हैं। पिछला अनुभव बताता है कि चंद निहित स्वार्थ प्रशासनिक अधिकारियों की मिलीभगत से आर्थिक संसाधनों का मनमाने ढंग से उपयोग करते हैं जिससे कमजोर वर्गों और गांव के सामूहिक हितों की अनदेखी हो जाती है। इस स्थिति को सुधारने के लिए जहां सदस्यों को अधिक जागरूक बनना होगा वहां स्वयंसेवी संगठन भी निगरानी तंत्र के रूप में काम कर सकते हैं। हाल में नई दिल्ली में 'ग्रामीण विकास में स्वयंसेवी संस्थाओं की भूमिका' विषय पर आयोजित विचार गोष्ठी में यही बात जोरदार ढंग से कही गई। स्वयंसेवी संस्थाएं क्योंकि निस्वार्थ ढंग से काम करती हैं अतः आम लोगों को उनके अधिकारों के प्रति जागरूक बनाने के साथ-साथ वे राज्य सरकार अथवा संबंधित अधिकारियों तथा पंचायत संस्थाओं को अनियमितताओं की जानकारी पहुंचाते हुए फीड बैंक की अपनी भूमिका बखूबी निभा सकती हैं।

शिक्षा एवं जागरूकता

जैसा कि ऊपर कहा गया है कि जागरूकता पंचायती राज संस्थाओं के सुचारु संचालन की बुनियादी आवश्यकता है। जब तक पंचायतों के सदस्य, विशेष रूप से कमजोर वर्गों के सदस्य और महिला प्रतिनिधि, अपने अधिकारों तथा संविधान संशोधन कानून के अंतर्गत शासन में आम लोगों की भागीदारी को सुनिश्चित करने के लिए निर्धारित दिशा-निर्देशों को नहीं समझ पायेंगे तब तक पंचायती राज प्रणाली लागू करने के अपेक्षित लक्ष्य नहीं मिल सकते। इसलिए गांवों में साक्षरता दर बढ़ाना अत्यंत आवश्यक है। राष्ट्रीय साक्षरता मिशन के अंतर्गत चल रहे साक्षरता अभियान के माध्यम से यह लक्ष्य प्राप्त होने की आशाएं बनी हैं। जिन जिन क्षेत्रों में साक्षरता का विस्तार हुआ है वहां लोगों में अपने अधिकारों और कर्त्तव्यों की जानकारी भी बढ़ी है। साक्षर लोग अन्याय, शोषण तथा भ्रष्टाचार के विरुद्ध आवाज उठाते हैं और साथ ही स्वास्थ्य, शिक्षा, उद्योग, कृषि तथा अन्य क्षेत्रों में चलाए जाने वाले कार्यक्रमों में सहयोग देने और उनका लाभ उठाने का प्रयास करते हैं। मध्य प्रदेश के पिछड़े जिले दुर्ग में पिछले

दिनों साक्षरता का चमत्कार देखने को मिला। वहां साक्षरता अभियान के अंतर्गत शिक्षित लोगों ने बाढ़ से पीड़ित लोगों की सहायता करने तथा लोगों में बीमारियों का पता लगाने के लिए स्वास्थ्य सर्वेक्षण कार्यक्रम सफलतापूर्वक चलाये। साक्षर लोगों में नए कार्यक्रम चलाना सरल हो जाता है क्योंकि वे नई बातों को जल्दी ही अपनाते हैं। इस समय देश के विभिन्न भागों में चल रहा साक्षरता अभियान जन-आंदोलन का रूप ले चुका है और स्वयंसेवी संगठन इसमें अग्रणी भूमिका निभा रहे हैं। इस तरह के आंदोलन से पंचायती राज संस्थाएं वास्तव में जन संस्थाएं बन सकेंगी। संचार माध्यम भी इस दिशा में लोगों को जागरूक बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं परन्तु उनकी भूमिका भी तभी सार्थक होगी जब अधिक से अधिक लोग शिक्षित होंगे।

जाहिर है कि पंचायती राज संस्थाओं को कानूनी रूप से अधिकार संपन्न बना देना ही पर्याप्त नहीं है, उनका वास्तविक कामकाज वैसा ही होगा जैसे लोग उनमें चुनकर आएंगे। अतः गांवों में समझदार और कर्त्तव्यशील व्यक्तियों को तैयार करना भी उतना ही आवश्यक है जितना सत्ता का विकेन्द्रीकरण करना। जहां हमारे राजनेताओं तथा नौकरशाही को राजनीति व प्रशासनिक हस्तक्षेप न करते हुए पंचायतों में स्वतंत्र रूप से काम करने की प्रवृत्ति विकसित करनी होगी वहीं साक्षरता अभियान, स्वयंसेवी प्रयासों तथा संचार माध्यमों से ग्रामीण जनता में जागरूकता बढ़ानी होगी तभी गांवों में निचले स्तर पर सत्ता के विकेन्द्रीकरण और आम आदमी को शासन में भागीदार बनाने का वह लक्ष्य प्राप्त किया जा सकेगा जो 73वें संविधान संशोधन अधिनियम में निहित है।

1370, सेक्टर-12,
आर.के. पुरम,
नई दिल्ली-110022

(पृष्ठ 10 का शेष)

73वें संविधान संशोधन...

इधर पंचायतों के चुनाव राज्यों द्वारा न कराने से केन्द्र सरकार के ग्रामीण विकास मंत्रालय ने धमकी दी है यदि राज्य सरकारें चुनाव नहीं करायेंगी तो मंत्रालय उन राज्यों को विभिन्न ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के लिए अनुदान देना बंद कर देगा।

उपरोक्त के अलावा इधर एक घटना और घटी है। जैसा कि विदित है 73वां संवैधानिक संशोधन पांचवे व छठे अनुसूची क्षेत्र में लागू नहीं है। इन क्षेत्रों में 73वें संविधान संशोधन को लागू करने के लिए जून 1994 में केन्द्रीय ग्रामीण विकास मंत्रालय ने सांसद श्री दलीप सिंह भूरिया की अध्यक्षता में विशेषज्ञ समिति गठित की थी जिसने अपनी रिपोर्ट प्रधानमंत्री को 4 फरवरी 1995 को भेंट की है। इस समिति ने अन्य बातों के अलावा सिफारिश की है कि 73वें संविधान संशोधन को अनुसूचित क्षेत्रों में जनजातियों के रीति रिवाज और संस्कृति को ध्यान में रखकर लागू किया जाए। यह इन क्षेत्रों में निचले स्तर पर लोकतंत्र बहाल करने का उचित कदम है। इन प्रदेशों में अब तक जनजाति परिषद, ग्रामीण परिषद आदि हैं जो लोकतांत्रिक तरीके से गठित नहीं होती हैं।

निष्कर्ष

73वें संविधान संशोधन के अधिनियम बनने के बाद सभी राज्यों ने एक वर्ष के अन्दर अपने पंचायती राज अधिनियमों में संशोधन कर लिये थे चूंकि उसमें संवैधानिक आदेश था। राज्यों के अधिनियमों में मोटे तौर पर संविधान संशोधन द्वारा दिये गये अनिवार्य बातों के अलावा कोई बदलाव नहीं है। राज्यों ने अनिवार्य बातों को अधिनियम में शामिल कर बाकी पुराने अधिनियम को ज्यों का त्यों रख दिया है।

संविधान संशोधन के दो साल होने जा रहे हैं लेकिन अभी तक सभी राज्यों में पंचायतों के चुनाव नहीं हुए हैं। इससे सिद्ध होता है कि राज्य स्तर पर राजनैतिक इच्छा व प्रशासनिक सहयोग नहीं है। लेकिन इसमें हताश होने की आवश्यकता नहीं है। 73वां अधिनियम और उसके बाद राज्यों मे विकेन्द्रीकृत शासन व विकास के पति दृष्टिकोण में जो बदलाव हुए हैं, वह एक अच्छी शुरुआत है।

पंचायती राज संस्थाओं के लिए आयोजना और वित्त व्यवस्था

ए. के. दूबे* व संजय मित्रा*

संविधान (73वां संशोधन) अधिनियम, 1992 से पंचायती राज के बारे में काफी आशाएं उभरी हैं। अब पंचायतों को संवैधानिक दर्जा प्राप्त हो गया है। पंचायतों के लिए इस सुखद आभास में इन्हें पहले जो नाम-मात्र के अधिकार और दायित्व मिले हुए थे और जो बहुत कम साधन प्राप्त थे उनके कारण इनकी सफलता के बारे में अभी भी कुछ संदेह व्याप्त हैं। यह सही है कि 1960 और 1970 के दशकों में पंचायती राज प्रणाली की असफलता का सबसे बड़ा कारण वित्तीय साधनों की कमी थी। सभी बातों के लिए पंचायतों का राज्य सरकारों पर निर्भर रहने और उनके पास पर्याप्त अधिकार और दायित्व न होने से ये संस्थाएं निष्प्रभावी बन गई थीं।

पंचायतों को वित्तीय संसाधन उपलब्ध कराने के बारे में संविधान (73वां संशोधन) अधिनियम, 1992 में ही पहली बार सोचा गया हो ऐसी बात नहीं है। 1951 में स्थानीय वित्त जांच समिति ने पंचायतों की वित्तीय स्थिति को सुदृढ़ बनाने के बारे में कुछ सिफारिशें की थीं। उदाहरण के तौर पर उन्होंने यह सिफारिश की थी कि ग्राम पंचायत को पंचायत क्षेत्र से प्राप्त होने वाले भूमि लगान का 15 प्रतिशत अंश दिया जाना चाहिए। इसी प्रकार, अचल संपति के हस्तांतरण पर कर लेने, पंचायतों द्वारा सार्वजनिक भूमि का इस्तेमाल करने, पंचायतों को लगान इकट्ठा करने का अधिकार देने, पंचायतों द्वारा लाभकारी कार्यों को प्रोत्साहन देने आदि की भी सिफारिश की गई थी। वास्तव में इस समिति ने सिफारिश की थी कि स्थानीय निकायों को एक निर्धारित सीमा तक कर लगाने का अधिकार होना चाहिए।

बाद में, कराधान जांच समिति ने 1953-54 में अपनी रिपोर्ट में निधियों के आबंटन के बारे में एक सोची समझी नीति बनाने का आह्वान किया था। समिति ने पंचायतों के विकास की प्रारंभिक अवस्था में राज्य सरकार से पर्याप्त अनुदानों की सिफारिश की थी। इसने यह भी सिफारिश की थी कि कुछ करों की वसूली का काम पूर्णतया ग्रामीण स्थानीय निकायों को सौंपा जाना चाहिए। ऐसे करों में भूमि-उपकर, संपत्ति के हस्तांतरण पर शुल्क, गृह कर, सेवा कर, वाहन कर, व्यवसाय पर कर, मनोरंजन कर आदि शामिल होंगे। इसके पश्चात् सामुदायिक परियोजना और राष्ट्रीय विस्तार सेवा के अध्ययन संबंधी दल ने 1957 में अपनी रिपोर्ट में पंचायत के वित्तों के महत्व पर बल दिया और पंचायतों के संसाधनों को बढ़ाने के लिए कई सुझावों की सिफारिश की थी। इस दल ने पंचायतों के प्रशासनिक और अन्य खर्चों के बारे में भी सिफारिश की थी। इसके बाद पंचायती राज संस्थाओं संबंधी समिति, जिसे अशोक मेहता समिति के नाम से जाना जाता है, ने 1978 में अपनी रिपोर्ट में राज्य वित्त आयोग की स्थापना की सिफारिश की थी। तथापि, जहां तक पंचायतों के लिए वित्त का संबंध है, वित्त व्यवस्था के महत्व को महसूस करने और मानने के बावजूद केवल अब संविधान के 73वें संशोधन अधिनियम, 1992 के द्वारा ही संविधान में एक नया अध्याय (अध्याय 9) जोड़ा गया था जिसमें अन्य बातों के अलावा राज्य वित्त आयोग की स्थापना का प्रावधान निहित है।

पंचायत वित्त हेतु संवैधानिक आधार

संविधान के भाग-9 में पंचायतों के बारे में प्रावधान निहित है। अनुच्छेद 243 एच प्राधिकृत करता है कि राज्य विधानमंडल कानून द्वारा :

(क) एक पंचायत को ऐसी प्रक्रिया के अनुसार और ऐसी सीमाओं के अधीन रहते हुए ऐसे कर, शुल्क, पथकर और फीस उद्गृहीत, संगृहीत और विनियोजित करने के लिए प्राधिकृत कर सकता है;

(ख) ऐसे प्रयोजनों के लिए और ऐसी शर्तों और सीमाओं के अधीन रहते हुए राज्य सरकार द्वारा उद्गृहीत और संगृहीत

*ग्रामीण क्षेत्र और रोज़गार मंत्रालय में उप सचिव

ऐसे कर, शुल्क, पथकर और फीसें किसी पंचायत को समनुदेशित कर सकता है।

(ग) पंचायतों के लिए राज्य की संचित निधि में से ऐसे सहायता अनुदान देने के लिए उपबंध कर सकता है; और

(घ) पंचायतों द्वारा या उनकी ओर से प्राप्त सभी धन राशियों के जमा करने के लिए ऐसी निधियों का गठन तथा ऐसी निधियों में से धन का प्रत्याहरण करने के लिए उपबंध कर सकता है जो विधि में विनिर्दिष्ट किए जाएं।

इस प्रकार अनुच्छेद 243-एच में कर प्रशासन हेतु राज्य सरकार को आवश्यक शक्तियां दी गई हैं।

अनुच्छेद 243-आई में राज्य वित्त आयोग के गठन की व्यवस्था है जो इस प्रकार है :- (I) राज्य का राज्यपाल संविधान (73वां संशोधन) अधिनियम, 1992 के प्रारंभ होने से एक वर्ष के भीतर यथाशक्य शीघ्र और उसके पश्चात पांचवें वर्ष के अवसान पर, पंचायतों की वित्तीय स्थिति का पुनर्विलोकन करने के लिए और उनके बारे में अपनी सिफारिशें राज्यपाल को प्रस्तुत करने के लिए एक वित्त आयोग का गठन करेगा। आयोग (क) उन सिद्धांतों को निर्धारित करेगा जो निम्नलिखित को शामिल करेंगे:

(1) राज्य द्वारा उदग्रहणीय ऐसे करों, शुल्कों, पथकरों और फीसों के शुद्ध आगमों का राज्य और पंचायतों के बीच वितरण जो इस भाग के अधीन उनके बीच वितरित किए जा सकेंगे तथा पंचायतों के बीच सभी स्तरों पर ऐसे आगमों के अपने-अपने अंशों का आबंटन;

(2) ऐसे करों, शुल्कों, पथकरों और फीसों का अवधारण जो पंचायतों को समनुदैशिक किए जा सकेंगे या उसके द्वारा विनियोजित किए जा सकेंगे;

(3) राज्य की संचित निधि में से पंचायतों को सहायता अनुदान;

(ख) पंचायतों की वित्तीय स्थिति को सुधारने के लिए आवश्यक उपाय सुझायेगा।

(ग) कोई अन्य विषय जो राज्यपाल द्वारा पंचायतों के ठोस वित्त पोषण के हित में वित्त आयोग को निर्दिष्ट किया जाए।

(II) राज्य का विधानमंडल कानून बनाकर आयोग का गठन, उसके सदस्यों के रूप में नियुक्ति के लिए अपेक्षित योग्यताएं और उनकी चयन विधि का निर्धारण करेगा।

(III) आयोग अपनी प्रक्रिया स्वयं निर्धारित करेगा और उसे अपने दायित्वों के पालन के लिए ऐसे अधिकार होंगे जो राज्य का विधानमंडल कानून द्वारा उसे प्रदान करे।

(IV) राज्यपाल इस अनुच्छेद के अधीन आयोग द्वारा की गई प्रत्येक सिफारिश और उसके बारे में की गई कार्रवाई का ज्ञापन राज्य के विधानमंडल के समक्ष रखवाएगा।

अनुच्छेद 280 (ख ख) में व्यवस्था है कि भारत के वित्त आयोग का यह दायित्व होगा कि वह राज्य के वित्त आयोग द्वारा की गई सिफारिशों के आधार पर राज्य में पंचायतों के संसाधनों में सुधार के लिए राज्य की संचित निधि में धन की वृद्धि करने के उपायों के बारे में राष्ट्रपति को सिफारिश करे।

इन सभी अनुच्छेदों को साथ-साथ पढ़ने और इनमें निहित व्यवस्थाओं से यह स्पष्ट होता है कि राज्य के भीतर कराधान द्वारा वर्तमान वसूलियों और प्राप्तियों तथा उनसे मिली राशि के समायोजन के अतिरिक्त, राज्य वित्त आयोग को अधिकार दिया जा सकता है कि वह पंचायतों के वित्त में सुधार हेतु सुझाव दे। परंपरागत रूप से वित्त आयोग गैर-योजना वित्तीय संसाधनों से संबंधित मुद्दों पर अपनी सिफारिशें देते हैं। इस संदर्भ में यह आवश्यक है कि पंचायती राज्य संस्थाओं को जो दायित्व सौंपे गए हैं, उनका सही परिप्रेक्ष्य में विश्लेषण किया जाए।

पंचायत वित्त का कार्यकारी आधार

पंचायती राज संस्थाओं को स्वशासन की इकाइयां माना गया है जो आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय की योजनाएं बनाएंगी तथा उन्हें कार्यान्वित करेंगी। पंचायती राज संस्थाओं के अधिकारों और दायित्वों को कारगर बनाने के उद्देश्य से संविधान में ग्यारहवीं अनुसूची जोड़ी गई है। उनमें दर्शायी गई अधिकांश योजनाओं की वित्त व्यवस्था योजनाओं के लिए आबंटित धन में से की जाएगी। फिर यदि योजना खर्च को अगली योजनावधि के लिए बढ़ा न दिया गया हो तो योजना के पूरा हो जाने के बाद योजना

खर्च को गैर योजना खर्च के रूप में हस्तांतरित कर दिया जाता है।

पंचायती राज संस्थाएं विकास योजनाओं हेतु स्टाफ एजेंसी ही नहीं होंगी बल्कि वे कार्यान्वयन एजेंसी भी होंगी और ये अधिकतर उन परियोजनाओं को कार्यान्वित करेंगी जिनके लिए धनराशि योजना खर्च से प्राप्त होगी। इसके अलावा पंचायती राज संस्थाएं जो अन्य खर्च करेंगी वह गैर योजना व्यय में से किया जाएगा। इसलिए यह जरूरी है कि पंचायती राज संस्थाओं को संसाधन सौंपने के सिद्धांतों पर विशेष रूप से विचार किया जाए।

कर और अनुदान

पंचायतों को राज्य कानून के अंतर्गत जो कर लगाने के अधिकार हैं, एक ओर तो वे राज्य और पंचायतों के बीच और दूसरी ओर विभिन्न स्तरों की पंचायतों के बीच बांटा जाएगा। इस प्रकार कुल प्राप्तियों का एक हिस्सा ही पंचायतों को मिलेगा। पंचायतों की आवश्यकताओं, उनके कार्यक्षेत्र, आकार और उन्हें सौंपे गए दायित्वों के अनुरूप पंचायतों को वर्तमान वसूली बढ़ाने के पर्याप्त उपाय करने होंगे। पंचायतों को परियोजनाओं को चलाने के लिए केंद्र सरकार अथवा राज्य सरकार से अनुदान सहायता पहले की तरह मिलती रहेगी। लेकिन संसाधन जुटाने के उपायों पर राज्य वित्त आयोग को विचार करना होगा। इसलिए यह सही प्रतीत होता है कि राज्य के वित्त आयोग न केवल गैरं योजना मदों बल्कि योजना व्ययों पर भी विचार करें।

पंचायत वित्त के ऐसे बहुत से पहलू हैं जिनकी ओर तत्काल ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है। कर लगाने और उन्हें वसूलने के अलावा राज्य और पंचायतों तथा पंचायतों के बीच आपस में करों का बंटवारा भी एक महत्वपूर्ण मुद्दा है जिस पर सोच-विचार किया जाना चाहिए। पंचायतें कानून के तहत अनेक तरह के कर और उपकर लगाकर धन प्राप्त कर सकती हैं। इनमें गृह कर, भवन कर, मंडीकर तथा चुंगी, तथा मत्स्य पालन, बागवानी, मछली पालन, दुधारू पशु पालन जैसी कृषि से संबंधित गतिविधियों पर कर अथवा चुंगी, स्टांप शुल्क पर प्रभार, भूमि लगान, मनोरंजन कर और अन्य कर शामिल हैं। इनमें व्यवसाय कर, भवन कर, संपत्ति के हस्तांतरण पर शुल्क, जन सुविधाओं के लिए सेवा कर और ऐसे अन्य कर शामिल हैं जो केवल किसी स्थानीय प्राधिकरण द्वारा ही लगाये जा सकते हैं।

पहले ऐसे भी मामले रहे हैं जहां हालांकि पंचायती राज कानून के तहत पंचायतों को कर लगाने के लिए अधिकार दिया गया लेकिन पंचायतों ने इन करों को लगाने में रुचि नहीं दिखाई। कर न लगाने से संसाधन जुटाना कठिन हो जाता है। बहुत से मामलों में कर लगाए गए थे, लेकिन इन करों को जानबूझ कर वसूला नहीं गया। इससे राजस्व वसूली को धक्का पहुंचा और इसका सीधा प्रभाव उनकी वित्तीय स्थिति पर पड़ा जिससे पंचायतों के पास संसाधनों की कमी बनी रही।

ऐसे बहुत से कर हैं जो राज्य सरकार द्वारा लगाये जाते हैं लेकिन करदाता ग्रामीण क्षेत्रों के होते हैं। इन करों को राज्य और पंचायतों के बीच बांटने के लिए स्पष्ट सिद्धांत निर्धारित किए जाने चाहिए। इनमें बिक्री कर, मोटर वाहन कर, कई प्रकार के भूमि प्रभार सिंचाई कर, वाणिज्यिक फसलों पर बागान कर आदि शामिल हैं।

जैसा कि पिछले पैराग्राफ में स्पष्ट किया गया है कि कराधान पंचायतों की कुल पावतियों का एक भाग होगा। बाकी राज्य सरकार से अनुदान के रूप में अथवा योजना और गैर-योजना निधियों की मार्फत प्राप्त होगा। आवश्यकता और पूर्वानुकूलता के आधार पर पंचायती राज संस्थाएं ऋण लेने के लिए स्वतंत्र हैं और वे उस सीमा तक अपनी प्राप्तियां बढ़ा सकती हैं। हालांकि ऋण की राशि को देयता के रूप में दर्शाना होगा और पंचायत बजट में उसे लौटाने के लिए आवश्यक उपाय सुनिश्चित करने होंगे।

पंचायतों द्वारा नकद राशि का प्रबंध

राज्य वित्त आयोग पंचायतों द्वारा नकद राशि के प्रबंध के तरीकों का भी सुझाव दे सकता है। कार्यक्रमों के कार्यान्वयन के स्तर पर योजना निधि और गैर-योजना निधि के बीच अंतर मात्र सोचने का एक तरीका है और व्यावहारिक रूप में जब पैसा खर्च किया जाता है तब इसमें कोई अंतर नहीं रहता है। इसलिए वित्त आयोग आर्थिक विकास, सामाजिक न्याय, स्थापना और अन्य योजनाओं पर खर्च करने के बारे में पंचायती राज संस्थाओं को शिक्षित कर सकता है। अब जिला परिषदों को अपने योजना कार्यों के लिए अच्छी खासी रकम मिलेगी, इसलिए उन्हें नकद राशि के संभालने और वित्तीय प्रक्रियाओं में अधिक दक्षता प्राप्त करनी होगी। इसके लिए धन के प्रबंध में लगे स्टाफ को प्रशिक्षण देने

और नये स्टाफ की नियुक्ति करने, दोनों तरफ ध्यान देना होगा ताकि पंचायतों को मिले धन का प्रबंध अच्छी तरह से हो। यदि पंचायतों को अपनी परियोजनाओं के लिए संस्थागत ऋण लेना पड़ा और उन्हें अपना कामकाज वाणिज्यिक प्रणाली के रूप में चलाना पड़ा तो इस बारे में उन्हें व्यावसायिक दृष्टिकोण अपनाना होगा।

पंचायतों की वित्त व्यवस्था नगरपालिका की वित्त व्यवस्था से काफी भिन्न है। जबकि नगरपालिका की वित्त व्यवस्था चुने हुए शहरी समूह की परियोजनाओं के लिए होती है, पंचायतों की राशि बहुत बड़े क्षेत्र में फैले लोगों के लिए होती है। संसाधन जुटाने की दृष्टि से शहरी ढांचे में कर एकत्र करने, करों की वसूली और धन का इस्तेमाल करने और समस्याओं को हल करने का स्वरूप ग्रामीण ढांचे की तुलना में भिन्न होता है। इसके अतिरिक्त, शहरी उद्यम, जैसे कि वे संविधान की 12वीं अनुसूची में दिए गए हैं, पूंजी प्रधान हैं और इसलिए परियोजना प्रबंध का ग्रामीण परियोजना प्रबंध से भिन्न होना स्वाभाविक है। इसलिए विचारणीय विषयों को दो भागों में बांटना सही होगा – एक नगरपलिकाओं के वित्त प्रबंध और दूसरा पंचायत वित्त से संबंधित है। तदनुसार, राज्य वित्त आयोग को अपने विचार-विमर्श में इस अंतर को स्पष्ट करना होगा।

पंचायत वित्त के प्रति अविश्वास

हालांकि अधिकांश राज्यों में पंचायतें काफी लंबे समय तक निष्प्रभावी रही हैं लेकिन महाराष्ट्र, गुजरात, पश्चिम बंगाल, कर्नाटक आदि कुछ राज्यों में पंचायतें अपेक्षाकृत अधिक विकसित हैं। लेकिन इन राज्यों में भी कुछ कमियां है जिससे पंचायत वित्त पर अविश्वास बना है। इन्हें संक्षेप में नीचे दर्शाया गया है :

(1) अपने संसाधन सीमित है। इसका कारण यह है कि एक तो कर बहुत कम लगाए गये और फिर जो भी कर लगाए गए हैं उनकी वसूली अच्छी प्रकार नहीं की गई।

(2) पंचायती राज संस्थाएं काफी हद तक राज्य सरकार के विभिन्न प्रकार के अनुदानों पर निर्भर रहती हैं। ऐसे अनुदानों में बराबर का अंशदान, समान अनुदान, विशेष अनुदान आदि शामिल होता है।

(3) वास्तव में परियोजनाओं की निधियों पर राज्य सरकारों का नियंत्रण होता है और उनका वितरण राज्य सरकार की इच्छानुसार होता है।

(4) बिक्री कर, मोटर-वाहन कर आदि अनेक करों का अंश पंचायतों को नहीं मिलता। इसी प्रकार उत्पादन शुल्क का विभाजन भी नहीं होता।

(5) पंचायती राज संस्थाओं को बहुत कम निधियां मिलती हैं और वे निश्चित होती हैं। उनमे फेर बदल की गुंजायश नहीं होती जिसके कारण पंचायतें अपनी प्राथमिकताओं के अनुसार राशि को नहीं बढ़ा सकतीं।

(6) चूंकि पंचायत की वित्त व्यवस्था वाणिज्यिक वित्त व्यवस्था के सिद्धांतों का पालन नहीं करती इसलिए वित्तीय संस्थाओं से पंचायतों को वित्त का मिलना कठिन होता है और पंचायतें इसके लिए प्रयास भी नहीं करतीं।

(7) कार्यक्रमों को लागू करते समय, योजना पर समानंतर जोर नहीं दिया गया है। वास्तव में पंचायती राज्य संस्थाओं को वित्त की हमेशा कमी रही है। इसलिए योजनाएं बनाने के बारे में इन्हें कोई अनुभव नहीं हैं। योजना बनाने के बारे में ग्रामीणों को कोई जानकारी नहीं होती, उन्हें तो मात्र राज्य स्तर पर विभिन्न परियोजनाओं के लिए धन के बंटवारे का पता होता है।

विकेन्द्रीकरण योजना

पंचायती राज संस्थाओं को अब आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के कार्यक्रम तैयार करने और उन्हें लागू करने का दायित्व सौंपा गया है। इस दायित्व में जहां एक ओर विकास में प्रतियोगी प्राथमिकताओं के कारण क्षेत्रीय योजनाओं पर ज्यादा ध्यान देना होगा वहीं दूसरी ओर इसके लिए किसी विशेष क्षेत्र के लिए छोटी योजनाएं इस तरह बनानी होंगी कि वे सब मिलकर पूरे जिले की सामान्य विकास योजना का रूप ले सकें। योजना बनाने के लिए प्रायः जिले को ही एक सूक्ष्म इकाई माना जाता रहा है। ग्रामीण विकास और गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम हेतु प्रशासनिक प्रबंध की समीक्षा समिति ने अपनी रिपोर्ट में सिफारिश की है कि जिला स्तर और निचले स्तर की पंचायती राज संस्थाओं को ग्रामीण विकास कार्यक्रमों की योजना बनाने, उन्हें कार्यान्वित करने और उन पर निगरानी रखने की महत्वपूर्ण भूमिका सौंपी जानी चाहिए। वास्तव में समिति ने यहां तक भी सिफारिश की थी कि राज्य स्तर के योजना बनाने के कुछ कार्य विकेन्द्रीकरण जिला आयोजना को प्रभावी बनाने के उद्देश्य से जिला स्तर को

सौंपे जा सकते हैं।

अनुच्छेद 243 जैड डी, जोकि संविधान के भाग 9क में है, में जिला आयोजना समितियों की स्थापना की व्यवस्था है। यह इस प्रकार है:

(1) प्रत्येक राज्य में जिला स्तर पर एक जिला योजना समिति का गठन किया जाएगा जो जिले में पंचायतों और नगरपालिकाओं द्वारा तैयार की गई योजनाओं को समेकित करेगी तथा पूरे जिले के लिए विकास योजना का प्रारूप तैयार करेगी।

(2) राज्य का विधानमंडल निम्नलिखित के संबंध में कानून द्वारा प्रावधान कर सकता है :-

(क) जिला आयोजना समितियों के गठन का तरीका

(ख) ऐसी समितियो में पदों को भरने का तरीका

बशर्ते कि ऐसी समिति के कुल सदस्यों की संख्या के कम से कम 4/5 सदस्यों का चयन जिला स्तर पर पंचायत और जिले की नगरपालिकाओं के चुने हुए सदस्यों में से किया जाए। इनकी संख्या का निर्धारण जिले में ग्रामीण क्षेत्रों और शहरी क्षेत्रों की जनसंख्या के बीच अनुपात के अनुसार होगा;

(ग) जिले में योजना से संबंधित वे कार्य जो इन समितियों को सौंपे जा सकते हैं;

(घ) इन समितियों के अध्यक्षों को चुनने का तरीका;

(3) प्रत्येक जिला आयोजना समिति विकास योजना का प्रारूप तैयार करते समय -

(क) निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखेंगी :-

(1) पंचायतों और नगरपालिकाओं के बीच सामान्य हित के मामले जिसमें साझी आयोजना, पानी तथा अन्य भौतिक और प्राकृतिक संसाधनों का बटवारा और बुनियादी ढांचे तथा पर्यावरणीय संरक्षण का समेकित विकास शामिल है।

(2) उपलब्ध संसाधनों, चाहे वे वित्तीय हों अथवा अन्य, की सीमा और स्वरूप;

(ख) ऐसी संस्थाओं और संगठनों से परामर्श करना जिनका राज्यपाल के आदेश में उल्लेख हो।

(4) प्रत्येक जिला आयोजना समिति का अध्यक्ष समिति की सिफारिशों से बनी विकास योजना को राज्य सरकार को भेजेगा।

पंचायतों के प्रभारी मंत्रियों और सचिवों के 3 जुलाई 1993 को हुए सम्मेलन में सर्वसम्मति से यह सिफारिश की गई थी कि संविधान (74वां संशोधन) अधिनियम 1992 में की गई व्यवस्था के अनुसार जिला आयोजना समिति के गठन से संबंधित प्रावधान राज्यों के नए पंचायती राज कानून का भाग होंगे। इसलिए अधिकांश राज्यों ने अपने पंचायती राज कानूनों में जिला आयोजना समिति के बारे में प्रावधान शामिल किए हैं। हालांकि ये संविधान के भाग 9(क) में शामिल हैं जो शहरी स्थानीय निकायों के बारे में है। इस प्रावधान से जिले को एक आधार इकाई के रूप में मानकर क्षेत्र के समेकित विकास हेतु आयोजना में समन्वित प्रयास किए जा सकते हैं और इस दृष्टि वे यह अनुच्छेद 243 जी तथा संविधान की ग्यारहवीं अनुसूची के अंतर्गत दिए गए विषयों के बारे में कार्यों का पूरक है।

निष्कर्ष

पंचायत की वित्त व्यवस्थाएं पंचायतों के स्थानीय संसाधनों, अनुदानों और योजना निधियों तथा अतिरिक्त संसाधन जुटाने पर प्रभाव डालती हैं जिनका विवेकपूर्ण तरीके से प्रबंधन करना होगा। पंचायती संस्थाएं एक निर्धारित समयावधि के लिए योजनाएं बना सकती हैं और वित्तीय सीमाओं को ध्यान में रखते हुए विकास हेतु एक कार्य योजना तैयार कर सकती हैं। लेकिन इनके लिए राज्यों और पंचायती राज संस्थाओं के बीच कर प्रशासन और प्राप्त राशियों के विभाजन के बारे में और अधिक स्पष्ट परिकल्पना की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त इसके लिए नये कर लगाने हेतु संभावित क्षेत्रों का पता लगाने और करों को गंभीरता से वसूल करने की आवश्यकता होगी। इसके लिए लापरवाही नहीं करनी होगी और न ही लोगों की नाराजगी से डरना होगा। यदि पंचायतों को वित्तीय स्वतंत्रता अथवा कम से कम स्थायीत्व प्राप्त नहीं होता तो पंचायती राज संस्थाएं कारगर सिद्ध नहीं हो सकेंगी जैसी कि उनसे आशा की जा रही है।

अनुवाद : (श्रीमती) शशि बाला
53, नीमड़ी कालोनी,
दिल्ली-52

पंचायती राज : अतीत एवं वर्तमान

डा. बद्री विशाल त्रिपाठी

ग्रामीण भारत के लोग सुदूर अतीत से पंचायत संस्थाओं के माध्यम से स्वशासित समुदाय में रहते थे। रामायण, महाभारत और अन्य प्राचीन ग्रन्थों में भी पंचायतों की क्रियाशीलता का उल्लेख है। प्राचीन भारत में पंचायतें सामाजिक जीवन के प्रत्येक पक्ष को प्रभावित करती थीं। शासकों में परस्पर युद्ध होते रहे, शासक बदलते रहे परन्तु पंचायतों का कामकाज इस प्रकार चलता रहता जैसे शीर्ष पर कुछ हुआ ही न हो। वस्तुतः शासक पंचायतों के कामकाज में हस्तक्षेप करते ही न थे। पंचायतें ही ग्रामीण क्षेत्र में न्याय, अनुशासन, शिक्षा, स्वास्थ्य और निर्माण कार्यों की व्यवस्था करती थीं। भारतीय ग्राम पंचायतों की सराहना करते हुए सर चार्ल्स मेटकाफ ने यह उल्लेख किया कि पंचायतें ग्रामीण समुदाय के छोटे-छोटे गणतंत्र के समान हैं जो कि आत्म-निर्भर हैं। शासकों द्वारा सामान्यतः पंचायतों को प्रोत्साहन दिया जाता रहा है। कौटिल्य के 'अर्थशास्त्र' में वर्णित यह संस्था गुप्त शासन काल और राजपूत शासन काल में भी विकास की ओर अग्रसर होती रही। मुगल शासन काल तक पंचायतों के कामकाज में शासकों ने कोई हस्तक्षेप नहीं किया और यह निर्बाध चलता रहा।

ब्रिटिश सरकार शासन सत्ता के ध्रुवीकरण के प्रति सजग थी। इसलिए ग्रामीण लोकतंत्र की इन सक्षम इकाइयों को निष्क्रिय बनाना चाहती थी। फलतः ब्रिटिश शासकों ने पंचायत व्यवस्था को क्रमशः पंगु बना दिया। उन्होंने सरकारी अधिकार बढ़ाने और पंचायतों के अधिकार व कार्यक्षेत्र घटाने के प्रयास इस स्तर तक किये कि पंचायतों के प्रशासनिक और न्यायिक मामलों के निपटाने के अधिकार भी छिन गये। ब्रिटिश सरकार ने अपनी सोची समझी नीति के अनुसार रोजगार के अवसर, शिक्षा और स्वास्थ्य सेवायें नगरों में केन्द्रित कर लीं। ग्रामीण क्षेत्र के विवादों के निपटाने के लिये भी अदालतें नगरीय क्षेत्र में बनायी गईं। इन सबका परिणाम यह हुआ कि प्रबुद्ध ग्रामीण जन समूह नगरों की ओर आकर्षित होता गया और पंचायतें अशक्त होती गईं। इस अति उपयोगी संस्था के नष्ट हो जाने से जब ब्रिटिश सरकार कठिनाई अनुभव करने लगी तो पुनः उसने इस संस्था की आवश्यकता का अनुभव किया और इस संदर्भ में सुझाव देने के लिये 1907 में 'विकेन्द्रीकरण पर शाही आयोग' बनाया गया जिसने अपनी रिपोर्ट 1909 में प्रस्तुत की। विकेन्द्रीकरण पर शाही आयोग, 1909 ने भी यह अनुभव किया कि दीवानी और फौजदारी अदालतों की स्थापना और राजस्व तथा पुलिस प्रशासन में परिवर्तन के कारण गांव पंचायतों की स्वायत्तता समाप्त हो गयी। अतः आयोग ने यह सिफारिश की कि स्थानीय गतिविधियों के प्रशासन के लिए ग्राम पंचायतों को गठित और विकसित किया जाना चाहिये। आयोग का मत था कि दीवानी और फौजदारी न्याय व्यवस्था ग्रामीण स्वच्छता, ग्रामीण क्षेत्र में पाठशालाओं के भवन-निर्माण व उनके रख रखाव तथा पशुपालन से सम्बद्ध कार्य पंचायतों को दिये जाने चाहिये। सरकार ने आयोग की सिफारिशों को अंशतः स्वीकार किया और 1919 में मांटेग्यू चेम्स फोर्ड सुधार के फलस्वरूप स्थानीय स्वायत्त शासन और पंचायतों के सम्बन्ध में भारत सरकार अधिनियम, 1919 पारित हुआ। इस अधिनियम में पंचायतों के लिए नीति और कानून बनाने का दायित्व प्रान्तीय सरकारों को सौंपा गया। इसके पश्चात विभिन्न प्रान्तों ने पंचायत कानून पारित किया। परन्तु पंचायतों की क्रियाविधि में कोई उल्लेखनीय सुधार नहीं हो सका।

जनाधार पोषित और सदियों से जानी-परखी पंचायतों को पुनः सक्रिय बनाने के लिये महात्मा गांधी ने लगातार प्रयास किया। उनके अर्थ-दर्शन का तो आधार ही ग्राम-स्वराज था जिसमें पंचायतों की भूमिका महत्वपूर्ण थी। स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं को पुनः सक्रिय बनाने के लिए स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद प्रयास आरंभ किये गए। भारतीय संविधान में नियामक सिद्धान्तों में एक अनुच्छेद जोड़कर राज्यों को यह निर्देश दिया गया कि वे स्थानीय स्तर की संस्थाओं के विकास के लिए प्रयास करेंगे। संविधान में राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्तों के अनुच्छेद 40 में यह व्यवस्था की गयी है कि राज्य ग्राम पंचायतों की स्थापना के लिये अग्रसर होगा और उनको ऐसी शक्तियां व अधिकार देगा जो उन्हें स्वायत्त इकाइयों के रूप में कार्य करने के योग्य बनाने में सहायक हों। इस व्यवस्था के अनुरूप देश के विभिन्न भागों में पंचायतें बनीं। प्रथम पंचवर्षीय योजना के अंत तक यद्यपि बड़ी

संख्या में पंचायतों की स्थापना हुई, परन्तु न तो वे अपने कार्यक्षेत्र में सफल हो सकीं और न ही देश के समस्त गांवों को पंचायतों के अंतर्गत लाया जा सका। सितम्बर 1957 तक देश में कुल 1,52,237 पंचायतें स्थापित जो चुकी थीं जिनके अंतर्गत 3,98,922 गांव सम्मिलित थे। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में यह अनुभव किया गया कि जिले के भीतर सुगठित जनतांत्रिक प्रशासनिक ढांचे की आवश्यकता है ताकि पंचायतों को उच्चस्तरीय जनतांत्रिक संगठनों से जोड़ा जा सके। इस उद्देश्य से जनवरी 1957 में योजना आयोग ने बलवंतराय मेहता की अध्यक्षता में एक कार्य दल गठित किया जिसने अपनी रिपोर्ट नवम्बर 1957 में प्रस्तुत की। बलवंतराय मेहता समिति ने जिले में त्रिस्तरीय पंचायत राज व्यवस्था की स्थापना का सुझाव दिया जिसके आधार पर ग्राम पंचायतें, उनके ऊपर पंचायत समिति और शीर्ष पर जिला परिषद हो। इसके अतिरिक्त समिति ने यह सुझाव दिया कि विकास कार्यों के सम्यक क्रियान्वयन के लिए प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण होना चाहिये और ग्रामीण क्षेत्र के चुने हुए विकास कार्यों को विकेन्द्रित प्रशासनिक व्यवस्था के अंतर्गत लाया जाना चाहिये। बलवंतराय मेहता समिति के सुझाव के अनुरूप पं. जवाहरलाल नेहरू ने 2 अक्टूबर, 1959 को राजस्थान के नागौर जिले में त्रिस्तरीय पंचायत राज व्यवस्था की स्थापना की घोषणा की। उनका यह विचार था कि गांव से जिला स्तर तक लोगों के पंचायत राज व्यवस्था से जुड़ने पर ग्रामीण क्षेत्र का समुचित विकास होगा और गांव राष्ट्र की मुख्य विकास धारा से जुड़ सकेगा।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद आरंभिक वर्षों में पंचायतों के प्रति लोगों में अत्यन्त उत्साह था। त्रि-स्तरीय ढांचे की स्थापना के बाद लोगों में पुनः स्फूर्ति आई। परन्तु पंचायतों से ग्रामीण पुनर्निर्माण और सक्षम लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण की आशा पूरी न हो सकी। इस कारण लोगों का उत्साह घटता गया। इस गिरावट का मुख्य कारण पंचायती राज व्यवस्था की अंगीकृत अवधारणा में निहित विसंगतियां थी। पंचायती राज व्यवस्था को विकास कार्यों में सहायक मानने के पक्ष पर ही जोर दिया गया। इन्हें प्रशासनिक व्यवस्था का गौण अंग माना गया। निर्णय की ताकत या तो प्रशासन के हाथ में रही या राज्यों के हाथ में जो पंचायतों तक पहुंची ही नहीं। ग्रामीण आवश्यकताओं के कार्यक्रमों के निर्णय क्षमता का ध्रुवीकरण संसद और विधानमंडलों में होता गया। इस कारण ग्रामीण विकास के कार्यक्रम राजधानियों में बने और गांव में लागू किए गए। इसलिए गांव की वास्तविक स्थिति का विशिष्ट कार्यक्रमों से तादात्म्य ही नहीं हो सका। इसके अलावा पंचायत राज व्यवस्था के जन प्रतिनिधियों को उचित प्रशिक्षण नहीं दिया जा सका। पंचायती राज व्यवस्था की असफलता का दूसरा प्रमुख कारण यह रहा कि इनका नेतृत्व ग्रामीण संभ्रात और सम्पन्न वर्ग के लोगों तक सीमित रहा। फलस्वरूप अधिकांश जन सामान्य इस व्यवस्था से अपने को कटा हुआ अनुभव करने लगा और पंचायती राज व्यवस्था में उसकी भागीदारी न हो सकी। इससे पंचायती राज व्यवस्था की मूल भावना कि सब लोग मिल जुलकर कार्य करें, एक दूसरे के सहायक हों और स्थानीय समस्याओं का स्वतः निदान कर सकें, पूरी न हो सकी। पंचायतों की निष्क्रियता बढ़ाने में ईंधन का कार्य किया राज्य सरकारों द्वारा इनको मनमाने तरीके से भंग करना और नियमित रूप से चुनाव न कराना। कुछ राज्यों में 15 वर्षों तक पंचायतों का चुनाव नहीं कराया गया। वित्तीय संसाधनों की कमी भी पंचायतों के अकर्मण्यता में सहायक हुई अपने स्रोतों से पंचायतें अत्यन्त कम धनराशि एकत्र कर पाती थीं। परिणामतः वे राज्य सरकारों की मुखापेक्षी होती गईं। अशोक मेहता समिति, 1978 ने पंचायती राज संस्थाओं की दयनीय आर्थिक स्थिति का उल्लेख किया और उन्हें सबल बनाने के सुझाव दिए परन्तु इनकी स्थिति में कोई आधारभूत सुधार न हो सका। समिति ने द्विस्तरीय ढांचे का सुझाव दिया। इसे भी लागू नहीं किया जा सका।

पंचायती राज संस्थाओं की उपरोक्त विभिन्न विसंगतियों का परिणाम यह हुआ कि पंचायतें निष्क्रिय होती गईं। क्रमशः पंचायतें इस सीमा तक प्रभावहीन हो गईं कि ग्रामीण क्षेत्र में जन सामान्य के लाभार्थ सृजित परिसम्पत्ति का रख-रखाव करने में भी उनकी कोई भूमिका न रह गयी। पंचायतों द्वारा ग्रामीण बंजर भूमि विकास, वृक्षारोपण, सम्पर्क मार्ग के निर्माण, प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था, प्रौढ़ साक्षरता कार्यक्रम, ग्रामीण स्वच्छता आदि के कार्यक्रम सक्षमतापूर्वक चलाये जा सकते हैं। परन्तु इन स्थानीय प्रकृति वाले कार्यक्रमों में भी पंचायतों की भूमिका घट गयी। अतः पिछले कई वर्षों से यह अनुभव किया जाने लगा था कि पंचायतों को प्रभावी बनाने के लिये सक्षम सांविधानिक उपायों की आवश्यकता है। संविधान के 64वें संशोधन की प्रक्रिया इस ओर उठाया गया प्रभावी कदम था। परन्तु इस संशोधन को मूर्त रूप न दिए जा सकने के कारण सुधार की आवश्यकता बनी रही।

संविधान के 73वें संशोधन में पंचायती राज संस्थाओं की यथा स्थिति समाप्त करने और उन्हें अधिक सुदृढ़ करने तथा उनकी प्रभावी भूमिका सुनिश्चित करने का प्रयास किया गया। इस

संशोधन के अनुसार अब जनतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की इन संस्थाओं को सांविधानिक स्तर प्राप्त हो गया है। अब राज्यों के लिए यह आवश्यक हो गया है कि वे पंचायत संस्थाओं का गठन करें। संशोधन में पंचायतों की संरचना को विवेकपूर्ण बनाने की व्यवस्था है। पंचायती राज संस्थाओं में प्रभुता-सम्पन्न लोगों का ही वर्चस्व न रहे इसके लिए व्यवस्था की गयी है कि उनमें महिलाओं, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लोगों के लिए स्थान सुरक्षित किये जाएं। संविधान के 73वें संशोधन अधिनियम 1992 में पंचायती राज संस्थाओं के वित्तीय प्रावधानों के लिये कतिपय उपाय जोड़े गये हैं। अब यह आवश्यक बना दिया गया है कि राज्य सरकारों द्वारा लगाये जाने वाले कर, शुल्क, फीस आदि के निर्धारण और उसके द्वारा प्राप्त आय को राज्य सरकार और स्थानीय निकायों के बीच वितरण के लिये राज्य सरकारें वित्त आयोग गठित करें। यह आयोग स्थानीय निकायों द्वारा लगाये जा सकने वाले कर, शुल्क और अधिभार का सुझाव देगा तथा यह राज्य की संचित निधि से पंचायती राज संस्थाओं के लिये दिये जाने वाले अनुदान पर भी विचार करेगा। वित्त आयोग प्रत्येक पांचवें वर्ष राज्य के राज्यपाल द्वारा नियुक्त किया जाएगा।

पंचायती संस्थाओं को अब यह अधिकार प्राप्त है कि आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिये विकास योजनाएं बनायें और आर्थिक विकास तथा सामाजिक न्याय के कार्यक्रमों को कार्यान्वित करें। प्रत्येक स्तर पर महिलाओं के लिये एक तिहाई स्थान आरक्षित होने के कारण पंचायती राज संस्थाओं का स्वरूप अधिक लोकतांत्रिक और व्यावहारिक बन गया है। पंचायती राज संस्थायें अब अपने क्षेत्र में कृषि, भूमि सुधार, लघु सिंचाई, जल प्रबन्ध, पशुपालन, मत्स्यपालन, सामाजिक वानिकी, खादी एवं ग्रामोद्योग, ग्रामीण आवास, पेय जल, ग्रामीण सड़कें, शिक्षा, गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम, प्रौढ़ शिक्षा, सांस्कृतिक कार्यक्रम, स्वास्थ्य एवं सफाई, सामाजिक कल्याण, सार्वजनिक वितरण प्रणाली, परिवार कल्याण आदि के बारे में कार्यक्रम बना सकेंगी और लागू कर सकेंगी। यह अनुमान है कि पंचायती राज संस्थायें ग्रामीण क्षेत्र की समस्याओं का समाधान नवीन ऊर्जा के साथ कर सकेंगी। अब जिन राज्यों में पंचायत चुनाव हो रहे हैं या 73वें संशोधन के बाद हुए हैं वहां इनका कार्य निष्पादन आशा के अनुरूप होगा।

78/3 बांध रोड, एलनगंज,
इलाहाबाद-211001

हमें भारतीय होने पर गर्व है

मलिका एजेंसिज़,
जनक निवास, टेलिफोन एक्सचेंज के पीछे, एक्सचेंज रोड, जम्मू-180005

ग्रामीण विकास का अभिन्न अंग है ग्राम पंचायतों की प्रतिष्ठा

रामजी प्रसाद सिंह

पंचायत देश की प्राचीनतम संस्था है। उसकी प्रतिष्ठा हजारों वर्षों से अक्षुण्ण है। अभी भी देश के अनेक भागों में, असंख्य गांवों में, पंचायतों को सर्वाधिक महत्व दिया जाता हैं। पंचायतों द्वारा कदाचित कोई अन्याय भी हो जाता है तो भी लोग उसे सिर आंखों पर रखते हैं। पंचों के न्याय को ईश्वरीय न्याय मानते हैं। देश के वामपंथी विचार के लोगों ने भी पंचायतों की महत्ता स्वीकार की। मुंशी प्रेमचन्द की कहानी 'पंच परमेश्वर' इसकी साक्षी है।

पंचायतों की चर्चा मनुस्मृति और पुराणों में भी मिलती है। वास्तव में, यह संस्था भारत में लोकतन्त्र की जननी है। दो हजार वर्ष पहले देश में पंचायती प्रथा चरमोत्कर्ष पर थी। इसकी छत्रछाया में जन-साधारण अपने को स्वतन्त्र और मुक्त अनुभव करते थे। हमारे गांव स्वावलम्बी थे। उन्हें न्याय पाने के लिए बाहरी मदद की आवश्यकता नहीं होती थी। उनकी आर्थिक कठिनाइयां भी गांव के स्तर पर सुलझा दी जाती थीं। चिकित्सा आदि के लिए भी उन्हें दूर नहीं जाना पड़ता था। उनकी दैनिक जरूरत की चीजें उनके दरवाजे पर मिल जाती थीं। तरह-तरह की दूसरी सेवायें भी सहज और सर्वसुलभ थीं। गांव की सुरक्षा का प्रबन्ध भी पंचायतें संभालती थीं। शिक्षालय भी चलाती थीं।

ऐसी बात नहीं कि उस काल-खंड में गरीबी नहीं थी, बीमारी नहीं थी, वर्ग भेद या जातिभेद नहीं था। किन्तु यह भी सत्य है कि किसी के भूख से मरने की नौबत नहीं आती थी। सम्पूर्ण गांव एक दूसरे के सुख-दुख में शामिल होता था, भागीदार होता था। समाज में स्त्रियों की प्रतिष्ठा थी। क्रूर से क्रूर शासक को गांवों में राजस्व वसूली के लिए आक्रमण करने का मौका नहीं दिया जाता था। पंचायतें राजस्व वसूली करके शासकों को पहुंचा देती थीं।

गांव में पेय जल और सिंचाई जल का प्रबन्ध पंचायतें करती थीं, यद्यपि इसके लिए कोई लिखित कानून नहीं था। छोटे-मोटे झगड़ों को, जिन्हें आज दीवानी और फौजदारी अदालतें निपटाती हैं, पहले पंचायतें निपटाया करती थीं, जिसके विरुद्ध अंग्रेजी शासन काल में भी शायद ही कोई अपील होती थी। उनका फैसला अन्तिम माना जाता था। पारिवारिक विवादों को भी पंचायतें निपटाया करती थीं। आज भी पंच फैसलों का न्यायालयों द्वारा आदर किया जाता है, चाहे वह पंचायत परम्परागत हो अथवा राज्यों की पंचायती राज विधियों के तहत निर्वाचित पंचायती राज संस्था हो।

पंचों की परम्परागत संस्था वंशानुगत नहीं होती थी। उनका कोई विधिवत चुनाव भी नहीं होता था। वास्तव में गांव के किसी भी चरित्रवान और बुद्धिमान व्यक्ति को पंच की प्रतिष्ठा स्वतः प्राप्त हो जाती थी। इसके लिए किसी को दावा ठोकने की जरूरत नहीं पड़ती थी।

गांधी जी का योगदान

इससे गांवों में स्वराज का वातावरण अक्षुण्ण रहता था। किन्तु अंग्रेज शासकों को यह व्यवस्था पसन्द नहीं आई। इस कारण, ब्रिटिश शासन ने इस व्यवस्था को भंग कर वहां ब्रिटिश शासन व्यवस्था लागू कर दी। इसी के विरोध में गांधी जी ने स्वतंत्रता-प्राप्ति से अधिक ग्राम स्वराज पर बल दिया। उनकी धारणा थी ग्राम-स्वराज अर्थात स्वावलम्बी गांवों की स्थापना होने से ब्रिटिश सरकार की सत्ता स्वयं समाप्त हो जायेगी।

ग्राम स्वराज के अपने कार्यक्रम के सहारे गांधी जी ने गांवों के भोले-भाले निरक्षर नागरिकों को भी स्वतंत्रता आन्दोलन की ओर आकर्षित कर लिया। स्वतन्त्रता आन्दोलन का मोर्चा गांवों में खोलने की प्रेरणा उन्हें 1917 में चम्पारण-सत्याग्रह (बिहार) में मिली। गांधी जी एक पगड़ीधारी ग्रामीण की तरह वहां पहुंचे थे। नील की खेती करने वाले किसानों को अंग्रेजों द्वारा बेदखल किये गये चम्पारण के भूमिपतियों की जमीनें वापस दिलाने के लिए अदालत और जिलाधिकारी के समक्ष शान्तिपूर्वक आवेदन

पत्र रखने के लिए गांधी जी वहां पहुंचे तो दो-तीन दिन के अन्दर वे वहां के किसानों के हो गये और असंख्य किसान उनके हो गए। उनके दर्शनार्थियों की भीड़ देखकर अंग्रेजी शासक भयभीत हो गये। गोरे अधिकारियों ने गवर्नर से चम्पारण छोड़कर सुरक्षित स्थान में जाने की प्रार्थना की।

गांधी जी ने वहां कोई आन्दोलन नहीं किया। फिर भी सफल हो गये, क्योंकि वामन को विराट का समर्थन सहज रूप से प्राप्त हो गया था। इसी विराट शक्ति को निरन्तर जागृत रखने के लिए गांधी जी ने ग्राम पंचायतों को सशक्त बनाने का दायित्व संभाल लिया।

संविधान का निर्देश

प्रत्येक मंच से, यहां तक कि तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू द्वारा 1946 में दिल्ली में आमंत्रित एशियाई सम्मेलन में भी, गांधी जी ने ग्राम स्वराज की स्थापना के लिए संसार के गांवों में सशक्त पंचायतों की स्थापना पर बल दिया।

स्वभावतः हमारे संविधान निर्माताओं ने भी संविधान की धारा 40 में केन्द्र और राज्य सरकारों को ग्राम पंचायतों को संगठित करने का नीति विषयक निर्देश दिया और यह भी कहा कि उन्हें समुचित अधिकार और सम्बल (केवल अधिकार नहीं) प्रदान किया जाये ताकि वे स्वायत्तशासी इकाई के रूप में सुचारु रूप से अपने दायित्व का निर्वाह कर सकें।

राज्य सरकारों ने केन्द्र के अनुरोध पर पंचायती राज संस्थाओं का विधिवत संघटन किया। किन्तु उन्हें न उपयुक्त सत्ता दी गयी और न ही उपयुक्त साधन। इसके कारण पंचायतें निर्बल रहीं। प्रशासन की नींव के रूप में वह अपने दायित्वों का निर्वाह करने योग्य नहीं बन पायीं। स्वभावतः ग्राम स्वराज की कल्पना साकार नहीं हो सकी।

राजीव सरकार

गांवों में सशक्त पंचायतों की स्थापना की महत्ता तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी को 1988-89 में प्रतीत हुई जबकि एक प्रामाणिक सर्वेक्षण के द्वारा उन्हें ज्ञात हुआ कि गांवों के विकास के लिए सरकार जो धन आवंटित करती है उसका केवल छठा भाग गांवों तक पहुंचता है, शेष बिचौलिये चट कर जाते हैं अथवा प्रबन्ध (नौकरशाही) पर खर्च हो जाता है।

इस दुःस्थिति को दूर करने के लिए श्री राजीव गांधी ने जवाहर रोजगार योजना की घोषणा की तथा उसके तहत केन्द्रीय अनुदान सीधे ग्राम पंचायतों को भिजवाया। साथ ही उन्होंने ग्राम पंचायतों को संविधान द्वारा स्वीकृत शासन की सबसे निचली किन्तु सशक्त इकाई बनाने का संकल्प लिया जिनके अधिकार क्षेत्र पर राज्य या केन्द्र सरकार द्वारा अतिक्रमण करने की कोई गुंजायश न हो।

इसके लिए संविधान में संशोधन करने का श्री राजीव गांधी का प्रयास सफल नहीं हुआ क्योंकि कुछ राज्य सरकारों ने उनके प्रयास को राज्यों के अधिकार क्षेत्र पर अतिक्रमण मानकर उसका जोरदार विरोध किया।

नरसिम्ह राव सरकार

नरसिम्ह राव सरकार ने श्री राजीव गांधी के अधूरे कार्य को पूरा करने का संकल्प लिया और 73वां संविधान संशोधन अधिनियम (1993) पारित कर उसे 24 अप्रैल, 1993 से लागू करा दिया।

केन्द्र सरकार ने उस पर राज्य सरकारों की भी सहमति प्राप्त कर ली। उसके अनुसार प्रायः सभी राज्यों में 73वें संविधान संशोधन अधिनियम के अनुसार अपने राज्य की पंचायती संस्थाओं को ढालने के लिए पंचायत कानूनों में एक वर्ष के भीतर संशोधन करने की चेष्टा की। बिहार, मध्य प्रदेश, हरियाणा, उड़ीसा, गुजरात, कर्नाटक, त्रिपुरा, पंजाब, आंध्र प्रदेश तथा केरल में संशोधित कानून बनकर तैयार हो गया है, किन्तु उस पर अमल में कठिनाइयां व्यक्त की जा रही हैं।

73वां संविधान संशोधन अधिनियम

इस अधिनियम में ग्राम पंचायतों को ग्रामीण सरकार के रूप में गठित करने, वयस्क मताधिकार के आधार पर प्रत्येक पांच वर्षों पर उनका निष्पक्ष चुनाव कराना, पंचायतों में महिलाओं के लिए एक तिहाई स्थान आरक्षित करने और विघटित पंचायतों का चुनाव छः माह के अन्दर कराने का प्रावधान किया गया है।

इसमें सत्ता के विकेन्द्रीकरण की पक्की व्यवस्था की गयी है। उसके अनुसार राज्य सरकारों को पंचायतों का कार्यक्षेत्र निर्धारित

करने की छूट नहीं दी गयी है। इस अधिनियम के अनुसार राज्य सरकारों को कृषि, भूमि विकास, भूमि सुधार, पशुपालन, मछली पालन, जल प्रबन्ध, गरीबी उन्मूलन, प्राथमिक शिक्षा, स्वास्थ्य और सफाई आदि विभिन्न 29 विषयों पर ग्राम पंचायतों को अपनी सत्ता सुपुर्द करना अनिवार्य कर दिया गया है। राज्य सरकारों को यह छूट दी गयी है कि वे चाहें तो इन विषयों के अतिरिक्त भी कोई कार्यभार पंचायतों के सुपुर्द कर सकती हैं।

राज्य सरकारों से यह भी कहा गया है कि वे ग्राम पंचायतों के वित्त पोषण की पक्की व्यवस्था करें ताकि वे अपने अधिकार-क्षेत्र में आने वाले विषयों पर अपने दायित्व का कुशलतापूर्वक निर्वाह कर सकें।

वित्त पोषण के लिए ग्राम पंचायतों को राज्य सरकार की कृपा पर निर्भर नहीं छोड़ा गया है। उन्हें यह संवैधानिक निर्देश हैं कि पंचायतों को वित्तीय साधन हस्तांतरित करने के लिए राज्य स्तर पर एक वित्त आयोग बनाया जाये, जो केन्द्रीय वित्त आयोग की तरह सिफारिश करे कि पंचायतों को किस मानदंड के अनुसार वित्तीय सहायता दी जाए अथवा उन्हें कर, उपकर, चुंगी और शुल्क वसूलने का कितना अधिकार दिया जाए।

राज्यों को यह भी निर्देश है कि ग्राम पंचायतों का चुनाव कराने के लिए प्रत्येक राज्य में चुनाव आयोग नियुक्त किया जाए, जिसे केन्द्रीय चुनाव आयोग की तरह अधिकार और साधन सम्पन्न बनाया जाए। पंचायतों के लिए पृथक कोष की भी स्थापना की जा सकती है।

पंचों के चुनाव में मध्य प्रदेश अग्रणी

संविधान के 73वें संविधान संशोधन के आधार पर ग्राम, जनपद और जिला स्तर पर चुनाव कराने का श्रेय सबसे पहले मध्य प्रदेश की सरकार को जाता है। वहां साढ़े चार लाख पंच, 30 हजार सरपंच, करीब नौ हजार जनपदीय पंच, एक हजार जिला पार्षदों का चुनाव कराकर त्रि-स्तरीय पंचायतों का विधिवत गठन गत वर्ष अप्रैल-मई में कर दिया गया।

कई अन्य राज्यों में ग्राम पंचायतों की प्रक्रिया विभिन्न चरणों में जारी है। कई राज्यों में विधान सभाओं के चुनाव के कारण बाधा हुई। कर्नाटक में पंचायतों के चुनाव की प्रक्रिया, पिछली सरकार ने शुरू करा दी थी, किन्तु पंचायतों में पिछड़े वर्गों को आरक्षण का अनुपात निर्धारित किये जाने पर विवाद हो गया। अब राज्य सरकार इस पर उच्चतम न्यायालय की राय लेना चाहती है कि क्या पंचायतों में 50 प्रतिशत से अधिक स्थान पिछड़ों के लिए आरक्षित किये जा सकते हैं।

बिहार और कई अन्य राज्यों में पिछड़े वर्गों के लिए 50 प्रतिशत से अधिक आरक्षण किया गया है। कुछ और भी विवादास्पद प्रावधान किये गये हैं। इसके कारण पंचायतों के चुनाव टल रहे हैं। किन्तु पंचायतों के चुनाव अनिश्चित काल के लिए टाले नहीं जा सकते।

पंचायतों के संघटन में टाल-मटोल करने वाले राज्यों पर संविधान के उल्लंघन का आरोप लग सकता है। अब ग्राम पंचायतें राज्य सरकारों पर निर्भर नहीं रहीं। वह भी संविधान द्वारा निर्मित स्वतंत्र प्रशासनिक इकाई बन गयी हैं, जिसकी सत्ता का, जिसकी मर्यादा का, अधिकार क्षेत्र का अतिक्रमण नहीं किया जा सकता। देर या सवेर सभी राज्यों को संविधान के 73वें संशोधन के अनुरूप ग्राम पंचायतों का गठन करना होगा।

केन्द्र सरकार ने 74वां संविधान संशोधन अधिनियम बनाकर शहरी क्षेत्रों में नगरपालिकाओं के चुनाव भी, पंचायती राज संस्थाओं के अनुरूप कराने की शर्त लगा दी है। इसके अधिकार क्षेत्र का भी विस्तार किया जायेगा तथा इसके वित्त पोषण की भी पक्की व्यवस्था करनी होगी।

इसलिए राज्य सरकारों के लिए प्रादेशिक चुनाव आयोग और वित्त आयोग गठित करना अनिवार्य हो गया है।

चेतावनी

प्रधानमंत्री श्री पी. वी. नरसिम्ह राव ने राज्य सरकारों को चेतावनी दी है कि यदि वे ग्राम पंचायतों के संघटन में विलम्ब करेंगी तो उनके विरुद्ध कड़ी कार्रवाई की जायेगी। उन्हें केन्द्रीय अनुदान बंद किया जा सकता है।

तमिलनाडु को वास्तव में अनुदान बंद किये जाने की घोषणा हो चुकी थी क्योंकि राज्य सरकार ने पंचायतों के गठन में केन्द्र के दबाव पर आपत्ति की थी और उसे राज्यों के अधिकार क्षेत्र पर अतिक्रमण की संज्ञा दी थी। किन्तु, बाद में रिपोर्ट मिली कि तमिलनाडु सरकार भी पंचायतों के नव-निर्माण के लिए आवश्यक

कदम उठा रही है। राज्य सरकार के इस सकारात्मक दृष्टिकोण की सूचना मिलने पर केन्द्र सरकार ने अपना निर्देश वापस ले लिया।

जन जागृति

केन्द्र सरकार ने पंचायती राज संस्थाओं के नव-निर्माण की उपयोगिता का व्यापक प्रचार किये जाने का प्रबन्ध किया है ताकि ग्रामीण पुनर्निर्माण में केन्द्र सरकार की अभिरुचि से जनसाधारण अवगत हो और पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव कराने के लिए प्रबल जनमत तैयार हो।

सचमुच पंचायती राज संस्थाओं के पुनर्निर्माण की योजना से पिछड़े और दुर्बल वर्ग में विशेष जागृति आयी है। पुनर्गठित पंचायतों में महिलाओं के लिए एक तिहाई स्थान आरक्षित कर दिये गये हैं किन्तु अनेक महिला संगठनों ने उसे 50 प्रतिशत किये जाने की मांग की है। इससे महिलाओं में जागृति स्वयंसिद्ध है।

वास्तव में ग्राम-पंचायतों के नव-गठन के बाद गांवों के प्रशासन में महिलाओं की भागीदारी बढ़ जायेगी। सत्ता का भागीदार बनने के बाद उन्हें भी अपनी प्रतिभा का परिचय देने का मौका मिलेगा।

केन्द्र का पूरक प्रयास

पंचायती राज संस्थाओं को केन्द्र सरकार अपने कुछ अधिकार समर्पित करना चाहती है और उन्हें तरह-तरह की सुविधाएं जुटाना चाहती है। सरकार ने मंत्रालयों को इस दिशा में प्रयास करने का निर्देश दिया है।

इस विषय में संचार मंत्रालय अग्रणी हो गया है। संचार मंत्री श्री सुखराम ने प्रत्येक ग्राम पंचायत तक फोन सेवा पहुंचाने का लक्ष्य प्राप्त करने की घोषणा की है। उन्होंने यह भी कहा है दो-तीन वर्षों के अन्दर सभी गांवों तक फोन सुविधा पहुंचा दी जायेगी। संचार मंत्रालय ने पंचायती राज संस्थाओं को डाकघरों का प्रबन्ध भी सुपुर्द करने की घोषणा की है। रेल मंत्रालय रेल-मार्गों के आस-पास के गांवों की पंचायतों को रेल-मार्ग सुरक्षा के कार्य में भागीदार बनाना चाहता है।

चुनावी-आचार-संहिता

इन सारे प्रयासों से गांधी जी के ग्राम-स्वराज की परिकल्पना साकार होगी ऐसा विश्वास किया जा सकता है। केवल सावधानी इस बात की रखनी होगी कि पंचायतों के चुनाव में राजनीतिक हस्तक्षेप न हो। प्रादेशिक चुनाव आयोगों को पूरी स्वाधीनता दी जानी चाहिए।

मध्य प्रदेश के चुनाव आयोग ने ग्राम पंचायतों के चुनावों में केन्द्रीय चुनाव आयोग द्वारा जारी चुनावी आचार-संहिता को लागू किया था। उसके तहत कई तरह के प्रतिबंध लगाए गए थे। इस व्यवस्था को दिल्ली की स्थानीय सरकार ने भी लागू करने की घोषणा की है। वास्तव में सभी राज्यों को इसका अनुकरण करना चाहिए।

चुनाव-खर्च

पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव समय पर कराने में राज्य सरकारों के समक्ष आर्थिक समस्या भी उत्पन्न होंगी, क्योंकि इनके चुनावों पर भी राज्यों में उतनी ही धनराशि खर्च होगी जितनी लोक सभा या विधान सभाओं के चुनाव पर खर्च होती है।

अतएव, केन्द्र और राज्य सरकारों को पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव पर खर्च घटाने के प्रश्न पर गंभीरता से विचार करना चाहिए अन्यथा कई राज्य सरकारें दिवालिया हो जायेंगी।

चुनाव खर्च पर अतिशय धन की बर्बादी रोकने की दृष्टि से विधान सभाओं और पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव एक साथ कराये जा सकते हैं किन्तु एक साथ चुनाव कराने से पंचायतों को भी राजनीति का रोग लग सकता है। अतएव वैकल्पिक उपाय ढूंढ़ने के लिए इस विषय पर राष्ट्रीय बहस करानी चाहिए।

बी-2बी/285,
जनकपुरी, नई दिल्ली-110058

कहानी

विधाता

गजानन वर्मा

सूत के जलते हुए गुच्छे से बीड़ी सुलगाते हुए हलका ने रूपा से कहा—"कल पगार है।"....और वह मजदूरों के झुण्ड में बैठा हुआ आसमान ताकता रहा—न जाने किस विचारधारा में खोया हुआ। शायद वह अपनी मेहनत का हिसाब लगा रहा था।

हलका मजदूर है। मिल के स्पिनिंग खाते में वह काम करता है। उसकी पगार 45 रुपये और मंहगाई भत्ता 60 रुपये माहवार है। आठ घण्टे रोज मशीनों में खून पसीना बहाकर एक महीने तक वह जो कुछ श्रम करता है उसका फल उसे कल मिलने वाला है जिसे वह नादान एक संतोष की सांस खींचकर गिनने में अपने को खो रहा है। विज्ञान के आविष्कार से पूंजीवाद का विकास और श्रमजीवियों का ह्रास, दोनों सामने हैं। यह प्रश्न विचारणीय नहीं कि गलती आविष्कार की है या पूंजीवाद की।

हलका मिल से लगभग दो मील दूर समाज से तिरस्कृत मजदूरों की इस बस्ती में रहता है। बस्ती शहर से बाहर है। सुखिया हलका की लड़की है। उसकी उम्र लगभग 12 वर्ष है। चार-पांच साल का एक लकड़ा भी है। बच्चों के मां-बाप सुबह से ही मजदूरी पर जाते हैं और संध्या समय घर लौटते हैं। सुखिया बीमार है। एक टूटी-सी खाट पर वह आग के समान तपता काला काला सा पञ्जर लिए पड़ी है। ओढ़ने-बिछाने या दवा दारू का कोई इन्तजाम नहीं और न ही कोई देख-रेख करने वाला है—क्योंकि देख-रेख करने वाले तो सूरज निकलते ही मिल की सीटी पर कान लगाए पेट की आग बुझाने को घर से निकल जाते हैं।

जिस घर में सुखिया बीमार है, वह घर नहीं—एक टूटी सी झोंपड़ी है जिसकी जमीन सीलन से गीली है, चारों तरफ गंदगी और बदबू, तिस पर सर्द हवा और मच्छरों का हमला। रोगी की हिफाजत के काबिल कोई सुरक्षित स्थान नहीं। झोंपड़ी के आगे और पीछे गड्ढर हैं जहां से लगातार बदबू आती रहती है। रात के वक्त अक्सर कोने में एक तरफ एक छोटी-सी धुएंदार चिमनी जलती रहती है जिसकी लौ हवा के झोंके से बार-बार हिलती डुलती है।

(2)

सुखिया की बीमारी का आज दसवां दिन है और हलका के लिये धनवान होने की घड़ी है। सुबह से ही वह प्रसन्न है। आज का दिन उसकी मधुर कल्पनाओं का एक सुन्दर बगीचा बना हुआ है। वह सोचता है—'खर्ची के समय उसने 25 रुपये ही लिये थे—बाद में होटल के पांच रुपये के टिकिट भी ले लिये थे—बाकी आज 75 रुपये मिलेंगे; पर नहीं, इस महीने एक नागा भी तो हो गया है। आज जरूर बाबू मोहनलाल जी से पूछकर सुखिया के लिए दवाई लाऊंगा। बड़े दयालु हैं बाबूजी! बेदगिरी अच्छी जानते हैं। दो-चार दिन दवा देने से सुखिया अच्छी हो जावेगी। घर में बहुत सा सामान भी तो लाना है; हो सकेगा तो 5-10 रुपये का कपड़ा ही ले लूंगा या फिर एक साड़ी घरवाली मांगती थी, वही ले लूंगा... ।'

आंख पर चश्मा चढ़ाए स्पिनिंग खाते के हाजरी बाबू मोहन लालजी पगार के टिकट बांटने को आए। हलका ने अपना टिकट लेकर मौका देख हाथ जोड़कर दीनता से सुखिया की हालत का थोड़े से में वर्णन करके एक कागज के पुर्जे पर दवाई का नुस्खा लिख देने की प्रार्थना की। हाजरी बाबू ने हंसते हुए कहा—"हलका! भाई चाय पिलानी पड़ेगी; दवा तो मैं अभी लिख देता हूं।"

"हजूर, आप तो माई-बाप हैं। भला मैं कब नाहीं करता हूं?" हलका ने हाथ जोड़कर कहा।....और हाजरी बाबू गरीब मजदूर की जेब से चाय के लिए 25 पैसे का होटल टिकट लेकर एक कागज पर दवाई का नुस्खा रगड़कर चल दिए।

अपढ़ और नादान हलका ने अपनी पगार के 'पास' को बार-बार, चार-पांच आदमियों से पढ़वाकर यह ठीक तौर पर समझ लिया कि आज उसे सत्तर रुपये 75 पैसे पगार मिलेगी और वह पगार बंटने की जगह अपना काम छोड़कर लाईन में जाकर खड़ा हो गया।

(3)

लगभग एक घण्टा धक्का-मुक्की खाने के बाद हलका को दस-दस वाले सात नोट और 75 पैसे की रेजगारी मिल गई।

तीस दिन की कमाई हुई पूंजी लेकर हलका जब पलटने लगा तो उसके दो चार कर्जदारों ने उसका रास्ता रोक लिया और उसी समय पांच-सात रुपये वसूल लिये। हलका की क्षणिक प्रसन्नता चिन्ता के विचारों से अब गम्भीरता में बदलने लगी। दो कदम ही वह आगे बढ़ा था कि मिल के कम्पाउण्ड में सफाई करने वाले कर्मचारियों की आवाज उसके कानों पर आई—"भला करे माई-बाप, आना-दो आना इधर भी हुजूर। आपका मैला उठाते हैं, महाराज! और हलका ने आगे बढ़कर उन्हें एक चवन्नी दे दी।

शाम को मिल की छुट्टी के बाद जब हलका घर जा रहा था तो रास्ते में उसके मन में अनेक तर्क-वितर्क चल रहे थे। वह सपनों की दुनिया रचता हुआ चला जा रहा था। नगर की चहल-पहल, मोटर-साईकिल, दुकानों की चमक-दमक, साड़ियां, खिलौने, मिठाई ये सब उसके मन को खींच रहे थे। जन-समूह की इस भीड़-भाड़ से वह पागल-सा अपना रास्ता चीरता हुआ चला जा रहा था। थोड़ी देर में वह एक कलाली की दुकान के सामने अनायास आ गया। उसने देखा, आज इस दुकान पर खूब भीड़ है। सब लोग पी रहे हैं और मस्त हो रहे हैं। उसने सोचा, 'वह भी क्यों न पी ले थोड़ी-सी, महज अपना गम भूलने को? आखिर वह भी तो एक महीने तक मेहनत करता है—किसके लिए? अगर आज अपने मन की आग बुझाने से उसे संतोष मिल जाता है तो हर्ज ही क्या है? कोई बड़े खर्च की बात तो है नहीं। लग जाएंगे एक दो रुपये....!' और वह घुस गया अन्दर दुकान में। उसने भी एक दो प्याली चढ़ा ली और मस्त होकर झूमता हुआ फिर चल पड़ा। उसे अब यह सुध न रही कि सुखिया के लिए दवाई ले जानी है। चलते-चलते जब वह अपनी झोंपड़ी के रास्ते पर आया तो हीरालाल सेठ ने उसे टोका।

हीरालाल महाजन की परचून की दुकान है, ठीक मजदूरों की बस्ती को जाने वाले रास्ते के नुक्कड़ पर। हलका को शराब के नशे में मस्त देखकर उसने रास्ता रोका और अपना हिसाब मांगा। हीरालाल ने उसे बतलाया—"देख हलका! तुझ आज पगार मिली है, तूने बहुत दिन से रुपये नहीं दिये हैं; आज तक के तेरी तरफ सत्ताईस रुपये अस्सी पैसे हैं। आज मैं रुपये लिये बिना तुझे नहीं छोड़ूंगा। तूने बहुत वादे कर करके झांसा दिया है। गर रुपये नहीं देगा तो ठीक नहीं होगा। आइन्दा आटा-सामान नहीं दूंगा, चाहे तेरे बच्चे भूखों मर जाएं।"

हलका मस्त तो था ही—लड़खड़ाती जबान में बोला—"से से से....सेठ.....जी, न न न नाराज क्यों होते हो?....म म मैं क्या तुम्हारे रुपये खा जाऊंगा? लो, ये लो तुम्हारा हिसाब पूरा चूक लो"—और उसने कमर में से सारे पैसे सेठ के सामने कर दिए। बाकी रकम जो हीरालाल सेठ ने उसे दी, बिना गिने अपनी अण्टी में लगाकर वह आगे बढ़ गया।

घर पर दूसरा ही हाल था। दवाई की आशा में पड़ी-पड़ी सुखिया ने दम तोड़ दिया था। छोटा बच्चा और उसकी मां रो रहे थे। पड़ोसियों ने ओढ़ने की चादर का कफन बनाकर सुखिया के शव की तैयारी की थी। हलका देर से घर पहुंचा था और वह भी थोड़े से रुपये साथ लेकर। दुनिया की कर्जदारी उसे रास्ते में खा गई थी। परिश्रम और अभावों के गम ने उसको राहत देने के लिए रास्ते में रोक लिया था। सपनों की दुनिया में वह खो गया था। शराब की मस्ती का लाभ उठाकर बनिये ने उसे ठग लिया था। भाग्य ने उसे बेबस बेसहारा बनाकर घर पहुंचाया था। विधाता ने एक और चोट की उसकी फूल-सी बच्ची उसे सदा के लिए छोड़कर चली गई थी। दुनिया का सलूक गरीबों के साथ इसी तरह का है। पर विधाता का क्यों?

82, रविन्द्र नगर, फ्रीगंज, उज्जैन

> अगर हिन्दुस्तान के हर एक गांव में कभी पंचायती राज कायम हुआ, तो मैं अपनी इस तस्वीर की सचाई साबित कर सकूंगा—जिसमें सबसे पहला और सबसे आखिरी दोनों बराबर होंगे या यों कहिये कि न तो कोई पहला होगा, न आखिरी।
>
> **—महात्मा गांधी**

मध्य प्रदेश में सत्ता का विकेन्द्रीकरण गांवों के गलियारों तक

भंवर सिंह

स्वतंत्र भारत में 1952 से सामुदायिक विकास कार्यक्रम के साथ पंचायती राज व्यवस्था शुरू हुई। ग्रामीण पुनर्निर्माण में गांव वालों की भागीदारी को सुनिश्चित करने और उस कार्य में उन्हें शामिल करने के लिए इसकी शुरुआत हुई। दूसरी पंचवर्षीय योजना में ग्राम पंचायतों के विकास पर बल दिया गया। पंचायती राज की स्थापना सर्वप्रथम 2 अक्टूबर 1959 में तत्कालीन प्रधानमंत्री स्वर्गीय पं. जवाहरलाल नेहरू के कर कमलों द्वारा राजस्थान राज्य के नागौर जिले में हुई। उन्होंने पंचायती राज व्यवस्था का उद्घाटन करते हुए इसे नये भारत के संदर्भ में अति क्रांतिकारी और ऐतिहासिक कदम बताया था। हमारे देश के लाखों गांवों का विकास और गांव वालों की इच्छा जानने का एक मात्र मंच पंचायतें ही हो सकती हैं। पंचायतें मजबूत होंगी तो गांव मजबूत होंगे, गांव से जिला, जिले से राज्य और राज्य से देश मजबूत होगा।

पंचायती राज व्यवस्था को मजबूत करने के लिए समय-समय पर अनेक कदम उठाये गए। विभिन्न समितियों का गठन किया गया और रिपोर्ट प्रकाशित हुई। नवीन व्यवस्था के अन्तर्गत 15 मई 1989 को पंचायती राज के बारे में 64वां संविधान विधेयक लोक सभा में पेश किया गया। 10 अगस्त 1989 को लोक सभा में विधेयक पारित हो गया लेकिन राज्य सभा में पारित नहीं होने के कारण कानून नहीं बन सका। 16 सितम्बर 1991 को 72वां संशोधन विधेयक पेश किया गया जिसे दिसम्बर 1991 को संसद की संयुक्त प्रवर समिति को सौंप दिया गया। समिति ने 14 जुलाई 1992 को अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। संसद के दोनों सदनों द्वारा पारित करने और राष्ट्रपति की स्वीकृति मिलने के बाद 24 अप्रैल 1993 को पंचायत राज संबंधी 73वां संविधान संशोधन अधिनियम लागू हो गया। राज्यों को एक वर्ष के अंदर यानी 24 अप्रैल 1994 तक अपने-अपने कानूनों में तदनुरूप संशोधन करना था जिसके लिए ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा एक अधिसूचना जारी की गई। भारत के संविधान की धारा 40 के अंतर्गत राज्यों को ग्राम पंचायतों के गठन के लिए प्रावधान करने और उन्हें अधिकार तथा शक्तियां प्रदान करने के निर्देश दिए गए हैं।

मध्य प्रदेश सरकार ने संविधान के 73वें संशोधन के अनुरूप 29 दिसम्बर 1993 को राज्य विधान सभा में मध्य प्रदेश पंचायत राज विधेयक 1993 प्रस्तुत किया। इस विधेयक के पारित होने के बाद 19 जनवरी 1994 को मध्य प्रदेश निर्वाचन आयोग का गठन किया गया। 25 जनवरी 1994 को मध्य प्रदेश पंचायत राज अधिनियम संस्थापित किया गया। अधिनियम के प्रावधान के अनुरूप (1) ग्राम के लिए ग्राम पंचायत (2) खंड के लिए जनपद पंचायत (3) जिले के लिए जिला पंचायत का प्रावधान है।

राज्य निर्वाचन आयोग द्वारा 15 अप्रैल 1994 को पंचायतों के चुनाव की अधिसूचना जारी हुई। अधिसूचना के बाद 44 जिलों में 23 मई, 30 मई और 7 जून 1994 को पंचायतों के चुनाव सम्पन्न हुए।

जिला पंचायतों के लिए 50,000 की जनसंख्या पर एक प्रतिनिधि का चुनाव हुआ। प्रदेश में कुल 850 के लगभग ऐसे प्रतिनिधि चुने गए।

राज्य में नये पंचायत राज की विशेषताएं (त्रि-स्तरीय ढांचा)

1. प्रत्येक ग्राम सभा में सभी मतदाता सदस्य।
2. प्रत्येक ग्राम सभा के लिए एक पंचायत जिसमें आबादी के अनुसार कम से कम 10 और अधिक से अधिक 20 पंच होंगे।
3. जनपद पंचायत में आबादी के अनुसार कम से कम 10 और अधिक से अधिक 25 तक सदस्य होंगे।
4. जिला पंचायत में सदस्यों की संख्या आबादी के अनुसार कम से कम 10 और अधिक से अधिक 35 तक होगी।

निर्वाचन पद्धति

(1) स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव के लिए राज्य निर्वाचन आयोग का गठन किया गया। राज्य में विधान सभा की मतदाता सूचियों को आधार मानते हुए पंचायत मुख्यालय में वार्ड तथा प्रत्येक ग्राम में मतदाता सूची का प्रकाशन किया गया। समाचारपत्रों के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में सूचियों का व्यापक प्रचार-प्रसार कराकर आपत्तियां आमंत्रित की गई और उनका निराकरण सहायक रजिस्ट्रीकरण अधिकारियों द्वारा किया गया।

(2) पंच, सरपंच, जनपद और जिला पंचायत के सदस्यों को सीधा मतदाताओं द्वारा चुना गया।

(3) जनपद के और जिला पंचायत के अध्यक्ष, उपाध्यक्ष और ग्राम पंचायत के उप सरपंच का चुनाव निर्वाचित सदस्यों द्वारा हुआ।

आरक्षण

अधिनियम की धारा 13, 23 और 30 तथा पंचायत निर्वाचन नियम 1994 के प्रावधानों के अनुसार आरक्षण निम्न प्रकार होगा:

(1) पंचायतों के सदस्यों, पंचों और सरपंचों के लिए उनकी आबादी के अनुपात में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति के लिए पदों का आरक्षण होगा।

(2) अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति का आरक्षण यदि 50 प्रतिशत से कम है तो वहां कुल स्थानों का 25 प्रतिशत पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षित होगा।

(3) जिन पंचायतों में अध्यक्ष (सरपंच) अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति या पिछड़े वर्ग से नहीं है, वहां उपाध्यक्ष इन वर्गों से होगा।

(4) सभी स्तर की पंचायतों में एक तिहाई पद महिलाओं के लिए आरक्षित होंगे।

(5) ग्रामीण क्षेत्रों में राजनीतिक विद्वेष पैदा न हो इसलिए चुनाव गैर दलीय आधार पर होंगे।

कार्यकाल

(1) प्रत्येक पंचायत का कार्य काल लोक सभा एवं विधान सभा की तरह ही पांच वर्ष का होगा।

(2) पंचायत विघटित होने की स्थिति में शेष कार्यकाल के लिए नई पंचायत का गठन आवश्यक होगा।

पंचायतों को सौंपे गये कर्त्तव्य और अधिकार

महात्मा गांधी की कल्पना थी कि भारत में ग्राम स्वराज की स्थापना हो। इसी संदर्भ में 73वें संविधान संशोधन के अंतर्गत मध्य प्रदेश भारत का प्रथम राज्य है जिसमें तीन चरणों में मतदान कराके 20 अगस्त 1994 को स्वर्गीय राजीव गांधी के जन्म दिन पर पूर्णतया पंचायती राज की स्थापना करके सत्ता का विकेन्द्रीकरण किया है। अब ग्रामीण क्षेत्रों में विकास का कार्य पंचायतें करेंगी। साथ ही पंचायत विकास परिषद का गठन भी किया है जिसका उद्देश्य सत्ता का विकेन्द्रीकरण करना और जनता की भागीदारी बढ़ाना होगा।

ग्राम पंचायत

ग्राम पंचायतें अपने क्षेत्र के सर्वांगीण विकास के लिए जिम्मेदार होंगी। कृषि एवं बागवानी, निराश्रितों की सहायता, आंगनवाड़ियों का संचालन, साक्षरता, पेयजल, सार्वजनिक स्थानों पर रोशनी, जन्म-मृत्यु और विवाह का रिकार्ड, सार्वजनिक मार्गों से अतिक्रमण हटाने, खादी और ग्रामोद्योग को बढ़ावा देने और प्राथमिक शिक्षा आदि विषयों से संबंधित ग्रामीण विकास की सभी योजनाओं के कार्यान्वयन तथा निगरानी रखने की जिम्मेदारी ग्राम पंचायतों की होगी।

जनपद पंचायत

जनपद पंचायतों का कार्य अपने क्षेत्रों में आने वाली पंचायतों के बीच समन्वयक तथा मागदर्शक की भूमिका अदा करने का होगा। विभिन्न योजनाओं के प्रभावी क्रियान्वयन के लिए कार्यकारी नियंत्रण का अधिकार भी जनपद पंचायतों को है। समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, ट्राइसेम, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण शालाओं का प्रबन्ध, नियंत्रण और निरीक्षण तथा सामाजिक सुरक्षा पेंशन आदि योजनाओं के क्रियान्वयन का दायित्व जनपद पंचायतों का है।

जिला पंचायत

जिला पंचायतें जिला स्तर पर सरकार की इकाई के रूप में कार्य करेंगी। जनपद पंचायतों की योजनाओं को समन्वित कर पूरे जिले के सर्वांगीण विकास तथा उत्पादन और उत्पादकता बढ़ाने का दायित्व जिला पंचायतों का है। विभिन्न विभागों की हितग्राही

मूलक योजनाओं का प्रभावी क्रियान्वयन जिला पंचायत के माध्यम से किया जाएगा।

सामाजिक वानिकी, कृषि एवं बागवानी विकास, वन और पर्यावरण सुधार, पशुधन विकास और मत्स्य पालन, प्रौढ़ शिक्षा, सहकारिता तथा महिलाओं, युवकों तथा बच्चों के विकास आदि के लिए सरकार की योजनाओं के क्रियान्वयन की जिम्मेदारी जिला पंचायतों की है। जिला पंचायतों को सौंपे गये दायित्व के निर्वहन के लिए जिला स्तर पर कार्यकारी नियंत्रण का अधिभार भी जिला पंचायतों का होगा। हाल ही में जिला पंचायतों के अध्यक्षों को राज्य सरकार द्वारा मंत्री का दर्जा दिये जाने की घोषणा की गई है।

तीनों स्तरों पर सर्वांगीण विकास का कार्य सम्पन्न कराने के लिए सरकार ने ग्राम पंचायतों में सचिव, जनपद पंचायतों में विकास अधिकारी और जिला पंचायतों में जिलाधीश को सचिव के रूप में नियुक्त किया है ताकि पंचायत राज के माध्यम से गांवों का सर्वांगीण और चंहुमुखी विकास हो और वर्षों पूर्व की गांधी जी और विनोबा भावे की कल्पना और चिन्तन ग्राम राज से स्वराज के रूप में साकार हो सके।

संकाय सदस्य,
सहकारी प्रबन्ध संस्थान,
जिला–इन्दौर,
(मध्य प्रदेश) 452006

लघुकथा

स्लेट की पूजा

डा. मेहता नगेन्द्र सिंह

मंगरू और रधिया खेतिहर मजदूर हैं। पति-पत्नी दोनों को ईमानदारी की कमाई पर विश्वास है। मगर, पेटभर अन्न न मिलना और भूख का सुरसा हो जाना बहुत अखरता है। फिर भी, रधिया अपनी इकलौती सन्तान मूंगा को, स्कूल भेजने में आना-कानी नहीं करती। छह साल का बालक मूंगा तीन किलोमीटर दूर स्कूल जाते-जाते, प्रायः थक जाया करता है पर साहस नहीं खोता। लगन का धनी है मूंगा।

अनावृष्टि के कारण गांवों में तबाही हो गई। खेती-बाड़ी ठप्प। मजदूरी मिलने की किल्लत हो गयी। खेत-खलिहान रेगिस्तान-सा लगने लगा। पर पेट तो मानता नहीं। लाचार होकर मंगरू सूखे जलाशयो में सीप-घोंघा चुनने जाने लगा और रधिया पत्थर तोड़ने का काम करने लगी।

रधिया प्रतिदिन अंधकार होने तक लौटती है। भोजन बनाने का अलग बखेड़ा। झटपट रोटी पकाती है। भोजन के बाद मंगरू बीड़ी पीने में मस्त और रधिया बर्तन मांजने में व्यस्त। उधर मूंगा स्लेट और डिबरी लेकर झोंपड़ी से थोड़ी दूर पेड़ के नीचे जाकर पढ़ने में मशगूल हो जाता है। घंटे बाद रधिया भी मूंगा के पास पहुंच जाया करती है। यह रोज का सिलसिला है।

एक दिन रात्रि भोजन के बाद मंगरू रधिया को अपने पास रोक लेता है। कुछ सपने बुने जाते हैं। शहर चले जाने की कुछ बातें होती हैं। इसी बीच मूंगा ने पुकारा....''ऐ माई आओ न जल्दी, स्लेट की पूजा कर लो, मुझे नींद आ रही है।'' यह सुनते ही रधिया दौड़ कर मूंगा के पास चली जाती है। बात अधूरी छोड़कर चले जाने पर मंगरू को थोड़ी झल्लाहट होती है और ''स्लेट की पूजा कर लो माई'' के स्वर पर संशय भी। ''शिव की पूजा'', ''काली-दुर्गा की पूजा'' और ''वृक्ष की पूजा'' आदि की बात मंगरू की समझ में खूब आती है। पर ''स्लेट की पूजा'' का स्वर मंगरू को विस्मित कर देता है। मंगरू सोचने पर विवश हो जाता है कि रधिया रोज-रोज उसे छोड़ पेड़ के नीचे क्यों चली जाती है? मूंगा अकेले भी पढ़ सकता है। जिज्ञासा प्रबल हो जाती है, नजर बचाते हुए मंगरू पेड़ के निकट पहुंचकर देखता है कि रधिया मूंगा की स्लेट पर अपना हाथ फेरती है और मुंह से कुछ-कुछ बुदबुदाती भी है। रह-रहकर मूंगा झल्लाकर बोलता है–''अरे माई ऐसे लिखो र-धि-या। पहले ठीक से पेन्सिल पकड़ो और फिर सीधे से लिखो र-धि-या।''

पेड़ के नीचे कुछ आहट सी होती है। मंगरू पर नजर पड़ते ही रधिया झट से डिबरी बुझा देती है और मूंगा के साथ भागकर झोंपड़ी में चली जाती है। मंगरू भी ''जय हो स्लेट की पूजा'' कहते हुए अपना शीश झुकाता है और धीरे-धीरे झोंपड़ी की ओर बढ़ता है। साक्षर-सुख की नींद सोने।

ओ-50, डाक्टर्स कालोनी,
कंकड़बाग, पटना–800020

ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के उचित क्रियान्वयन हेतु सुझाव

डा. शिवा कान्त सिंह

भारत एक कृषि प्रधान देश है। इसकी अधिकांश जनसंख्या गांवों में निवास करती है। देश का मात्र चौथा व्यक्ति ही नगरीय जीवन व्यतीत करता है। वर्तमान में देश के गांवों में कुल जनसंख्या का 74 प्रतिशत निवास करता है। अतएव यदि देश का विकास करना है तो प्रभावी ग्रामीण विकास एक मूलभूत आवश्यकता है। इन्हीं मूलभूत आवश्यकताओं के पूरा न होने के कारण ग्रामीण क्षेत्रों में व्यापक रूप से गरीबी व्याप्त है। हमारे ग्रामीण समाज में वर्षों से चला आ रहा पिछड़ापन और उदासी आज भी अधिकांश गांवों में बनी हुई है।

ग्रामीण विकास से तात्पर्य गांव के लोगों का सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विकास करना है। ग्रामीण विकास का मुद्दा कोई नया मुद्दा नहीं है, बल्कि यह काफी पहले से ही प्रशासन का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कराता रहा है। इसी कारण प्रथम पंचवर्षीय योजना से लेकर चालू पंचवर्षीय योजना (आठवीं पंचवर्षीय योजना) तक ग्रामीण विकास हेतु अनेक कार्यक्रम लागू किये गये। जैसे—सामुदायिक विकास योजना (1952), राष्ट्रीय विस्तार सेवा कार्यक्रम (1953), खादी एवं ग्रामीण उद्योग कार्यक्रम (1957), ग्रामीण आवासीय योजना (1957), बहुउद्देशीय अनुसूचित जनजाति विकास खंड कार्यक्रम (1957), पैकेज कार्यक्रम (1960), गहन जिला कृषि कार्यक्रम (1960), व्यावहारिक आहार कार्यक्रम (1962), ग्रामीण उद्योग परियोजना (1962), गहन कृषि क्षेत्र कार्यक्रम (1964), कृषक प्रशिक्षण एवं शिक्षा कार्यक्रम (1966), कुआं निर्माण कार्यक्रम (1966), ग्रामीण जनशक्ति कार्यक्रम, (1969), सूखा क्षेत्र पीड़ित कार्यक्रम (1970), ग्रामीण रोजगार नकदी योजना (1971), लघु कृषक विकास एजेंसी (1971), जनजाति क्षेत्र विकास कार्यक्रम (1972), ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम (1972), न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम (1972), सूखाग्रस्त क्षेत्र कार्यक्रम (1973), विशेष दुग्ध उत्पादक कार्यक्रम (1975), बीस सूत्री कार्यक्रम (1977), मरुभूमि विकास कार्यक्रम (1977), काम के बदले अनाज कार्यक्रम (1977), संपूर्ण ग्रामीण विकास कार्यक्रम (1979), अन्त्योदय कार्यक्रम (1979), समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (1979), ग्रामीण युवा स्वरोजगार प्रशिक्षण कार्यक्रम, ट्राइसेम (1979), राष्ट्रीय रोजगार कार्यक्रम (1980), नया बीस सूत्री कार्यक्रम (1982), ग्रामीण क्षेत्रों में महिला एवं बाल विकास कार्यक्रम (1983), ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम (1983)।

इनके अलावा सातवीं एवं आठवीं पंचवर्षीय योजनाओं में ग्रामीण क्षेत्रों के सर्वांगीण विकास के लिए अनेक कार्यक्रमों को लागू किया गया। परन्तु कार्यक्रम जिस गति से बदलते गये, उस गति से ग्रामीण लोगों के जीवन-स्तर में परिवर्तन नहीं आया। इसके अनेक कारण हैं, जहां एक ओर प्रशासनिक ढांचे में अनेक कमियों के कारण यह प्रभावित हुआ है, वहीं दूसरी ओर ग्रामीण लोग इसके लिये स्वयं दोषी हैं।

वर्तमान में अनेक गांव ऐसे हैं जिनके दूर-दराज के क्षेत्रों में होने के कारण मुख्यालय से ही सर्वेक्षण कर लिये जाते हैं। इससे वास्तविक स्थिति से पूर्णतया वंचित रहते हुये भी संबंधित अधिकारी/कर्मचारी विकास कार्य चलाते हैं। अतः ग्रामीण विकास योजनाओं के प्रभावी क्रियान्वयन हेतु ऐसे समर्पित अधिकारियों की आवश्यकता है, जो ग्रामीण वातावरण और ग्रामीणों की समस्याओं से परिचित हों तथा उन्हें दूर-दराज के ग्रामीण क्षेत्रों में जाने में तनिक भी संकोच न हो। उनकी भावना सिर्फ सरकारी कार्य को निपटाने की न होकर, विकास कार्य को पूर्ण करने की होनी चाहिये। तभी वास्तविक ग्रामीण विकास संभव हो सकेगा।

ग्रामीण विकास योजनाएं रोजगार तथा उत्पादन में वृद्धि करने वाली होती हैं। विकास एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है, जिसके लिए पर्याप्त वित्त की जरूरत होती है। लेकिन अधिकांश ग्रामीण विकास कार्यक्रम वित्तीय साधनों की कमी के कारण असफल हो जाते हैं। अतः केन्द्र व राज्य सरकारों को चाहिये कि पर्याप्त वित्तीय सुविधाएं उपलब्ध कराएं।

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत चयनित

परिवारों को विभिन्न कार्यों हेतु ऋण तथा अनुदान की राशि उपलब्ध करायी जाती है। इससे कुछ परिवारों में यह धारणा बन जाती है कि अनुदान की राशि मुफ्त मिली है। अतः वे इसका उपयोग अनुत्पादक कार्यों में करने लगते हैं। अतः सरकार को चाहिये कि केवल उन परिवारों को ही अनुदान की राशि का लाभ दे, जो ऋण तथा अनुदान राशि का उपयोग उत्पादन कार्यों में उपयोग करते हैं। शेष सभी से पूरी राशि (ऋण और अनुदान) ब्याज सहित वापस ले लेनी चाहिये, ताकि इस डर से भी लोग प्राप्त ऋण तथा अनुदान का दुरुपयोग न करें। बल्कि वे परिवार स्वयं के पैरों पर खड़े होने के लिए कोशिश करें।

इस बात को नकारा नहीं जा सकता है कि हमारे गांव के अंधकार रूपी पिछड़ेपन को केवल ज्ञान रूपी प्रकाश से ही नष्ट किया जा सकता है। ग्रामीण क्षेत्रों के अधिकांश लोगों को अज्ञानता के कारण, उन कार्यक्रमों की जानकारी नहीं होती जो निर्बल वर्ग के कल्याण हेतु चलाये जाते हैं। यदि उन्हें कार्यक्रमों की जानकारी हो भी जाती है, तो उनकी उपयोगिता नहीं समझ पाते। इस प्रकार या तो वे इनके लाभ से वंचित रह जाते हैं या फिर अज्ञानतावश उसका दुरुपयोग कर बैठते हैं अर्थात उन्हें जो सहायता मिलती है उसे अनुत्पादक कार्यों में लगा देते हैं। इससे उनकी स्थिति यथावत बनी रहती है। आम आदमी की समुचित भागीदारी उसमें तभी सुनिश्चित हो सकती है जबकि उन्हें इन कार्यक्रमों के उद्देश्यों की जानकारी हो। जन सहयोग के बगैर प्रत्येक कार्यक्रम थोपा हुआ सा लगता है।

वर्तमान में ग्रामीण विकास योजनाओं का जो दरिया प्रवाहित हो रहा है, उसे अनेकों नाले प्रदूषित करते हुए स्पष्ट दिखाई देते हैं। अतएव जरूरत इस बात की है कि इनकी निर्मलता बनाये रखने के लिए प्रभावी उपाय किये जाने चाहिये, ताकि इसका प्रभाव प्रतिकूल न पड़े। इसके लिये सर्वप्रथम ग्रामीण क्षेत्रों की सोई हुई जनता को जागरूक करने की आवश्यकता है क्योंकि स्कूल, अस्पताल, सड़क, पंचायत घर के निर्माण तथा विभिन्न योजनाओं के तहत ऋण व अनुदान उपलब्ध करा देने मात्र से, तब तक कोई लाभ नहीं होने वाला है जब तक कि उनकी देखरेख व उनका सदुपयोग (उत्पादक कार्यों हेतु) करने में ग्रामीण स्वयं रुचि न लेते हों। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि पहले उन्हें उसकी उपयोगिता को गम्भीरतापूर्वक समझाना होगा "क्योंकि कोई भी वस्तु तब तक संसाधन नहीं कहलाती, जब तक उसकी उपयोगिता सिद्ध न हो।"

ग्रामीण विकास हेतु आवश्यकता इस बात की है कि ग्रामीण लोगों में पारस्परिक सद्भाव का वातावरण बनाकर विकास कार्यों की ओर उनका रुझान पैदा किया जाए। आपसी कलह, जाति-पांति, ऊंच-नीच की भावना के कारण ग्रामीण विकास और प्रगति के कार्यों में निश्चित ही बाधा आयी है। अतः विभिन्न स्वयंसेवी संस्थाओं के माध्यम से ही उपरोक्त समस्याओं का निवारण करते हुए ग्रामीण विकास के रचनात्मक कार्यों द्वारा गांवों की काया-पलट संभव है। यदि आपसी कलह समाप्त हो जाए और उनमें आपसी प्रेम भावना जाग्रत हो जाए तो पूरा समाज एक संयुक्त परिवार की भांति बन सकता है। इससे सामुदायिक विकास संबंधी विभिन्न योजनाओं को कार्यरूप में परिणत किया जा सकेगा।

कुमार टाइपिंग इन्स्टीट्यूट,
5, सिविल लाइन्स,
सागर, (म. प्र.) 470001

लेखकों से

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, कविता, संस्मरण, लघुकथा आदि भेजिये। रचनाएं दो प्रतियों में टाइप की हुई हों और उनके साथ मौलिकता का प्रमाण पत्र संलग्न हो अन्यथा उन्हें स्वीकार नहीं किया जाएगा। अस्वीकृत रचना लौटाने के लिए कृपया डाक टिकट लगा अपना पता लिखा लिफाफा लगाना न भूलें। सभी रचनाएं संपादक, 'कुरुक्षेत्र', 467, कृषि भवन, नई दिल्ली-110001 के पते पर भेजें।

—सम्पादक

पंचायती राज पर विनोबा जी के विचार

डा० अशोक कुमार सिंह,*

बुनियादी स्तर पर लोगों की भागीदारी एक ऐसा प्रभावशाली साधन है, जिसके माध्यम से आर्थिक विकास और जनता की आकांक्षाओं को पूरा किया जा सकता है और यह सुनिश्चित किया जा सकता है कि समाज के सबसे कमजोर तबके तक विकास के लाभ वास्तविक तौर पर पहुंचे। ऐसा माना जाता रहा है कि पंचायती राज संस्थाएं लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की सबसे उपयुक्त एजेंसी हैं, जिन्हें पर्याप्त शक्तियां और उत्तरदायित्व सौंपे जा सकते हैं, ताकि वे आर्थिक विकास के कार्यक्रम तैयार कर सकें और उन्हें कार्यान्वित कर सकें। संविधान का (73वां संशोधन) विधेयक, 1992 इस संकल्पना को वास्तविकता में बदलने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

आज जबकि भारतवर्ष ग्राम-पंचायतों की ओर उन्मुख हो रहा है, तब पूज्य विनोबा जी के ग्राम पंचायतों संबंधी बुनियादी और महत्वपूर्ण विचारों की उपयोगिता बढ़ गयी है। गांवों को स्वावलम्बी, स्वयंपूर्ण और श्री सम्पन्न बनाने के जो उपाय विनोबा जी ने बताये वे न केवल भावनागत बल्कि आर्थिक और सामाजिक मूल्यों की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण हैं।

प्राचीन भारत में ग्राम पंचायत

पंचायत शब्द के साथ-साथ प्राचीनता की मिठास जुड़ी है। यह उस पद्धति का सूचक है, जिसके द्वारा भारत के बेशुमार गांवों का शासन चलता था। यह भारत की सबसे बड़ी विशेषता थी कि यहां गांव-गांव में ग्राम संस्थाएं थीं। उस जमाने में गांव की आवश्यकता की चीजें गांव में ही पैदा होती थीं। गांव पूर्णतया स्वावलम्बी थे।

लेकिन हमारी सारी ग्राम संस्थाएं शनैःशनैः छिन्न-भिन्न हो गईं क्योंकि गांवों के काम धन्धे समाप्त कर दिए गए। वे यों ही समाप्त नहीं हुए, उन्हें योजनाबद्ध तरीके से समाप्त किया गया।

ग्रामसभा के मुख्य आधार

विनोबा जी ने ग्राम सभा के तीन मुख्य आधार बताए हैं। उनकी दृष्टि में ग्रामसभा का सर्वप्रथम आधार "विकेन्द्रित योजना" है। अगर कहीं एक स्थान पर सत्ता केंद्रित हो और वहीं पर सभी गांवों के लिए योजनाएं बनाई जाएं तो गांवों की समस्याएं हल नहीं हो सकेंगी। अतएव सारा आयोजन ग्रामीणों की बुद्धि से ही होना चाहिए। ऐसा नहीं होगा तो सबकी बुद्धि परती रखी गयी, यही कहा जायेगा। इसलिए यह उचित होगा कि स्थान विशेष की परिस्थिति को देखकर उस स्थान विशेष के लोग अपने हित की योजना बनाएं। द्वितीय, यह विकेन्द्रित शासन सर्वसम्मति से चलना चाहिए। सिर्फ बहुमत के शासन से आपसी झगड़े और द्वेष कभी कम नहीं होंगे। सारा काम सबकी सहमति से चले, यही उपयुक्त होगा। तृतीय, गांव में सदैव प्रेम का ही शासन चलना चाहिए, दण्ड का शासन कभी नहीं। सर्वसम्मति भी प्रेम से ही साधनी चाहिये। प्रेम का आग्रह रखने के कारण भले ही समाज की प्रगति धीरे-धीरे हो, अन्ततः वह होकर रहेगी। उनका तो यहां तक कहना था कि गांव से दण्ड को निकाल बाहर करने पर यदि गांव की प्रगति रुक जाये तो भी हर्ज नहीं है। दण्ड से प्रेम की शक्ति विकसित नहीं होती। उससे दिल का घाव नहीं भरता। इसलिए गांव से दण्ड को सर्वथा हटाकर उसकी जगह प्रेम की शक्ति का उपयोग होना चाहिए।

पंचायतों के पांच गुण

पंचायत का अर्थ है, पांच व्यक्तियों की समिति। विनोबा जी ने बताया था कि पंचायत के पांच सदस्य प्रेम, निर्भयता, ज्ञान, उद्योग और स्वच्छता होंगे।

(1) **प्रेम** : विनोबा जी ने बताया कि ग्राम पंचायत के एक सदस्य का नाम प्रेम होगा। सम्पूर्ण गांव को एक परिवार बनाया जाए और सभी लोगों में जमीन बांटी जाए। यह प्रेम परिवार बनाने का सारा कार्य प्रेम रूपी सदस्य करेगा। आज गांव में यह सदस्य नहीं है। प्रेम का स्थान स्पर्धा ने ले लिया है। वैसे आज गांव में थोड़ा प्रेम तो है, लेकिन वह छोटे से परिवार में कैद हो गया है। यह मेरा लड़का है, यह मेरी पत्नी है बस, प्रेम इतने में ही सीमित हो गया है। लेकिन इतने प्रेम से काम नहीं चलेगा, सम्पूर्ण ग्राम

*अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग देवेन्द्र डिग्री कालेज, बिल्थरा रोड, बलिया (उ.प्र.)-221715

को प्रेम-परिवार बनाना होगा।

(2) निर्भयता : ग्राम पंचायत का दूसरा सदस्य होगा निर्भयता। आज सर्वत्र भय छाया हुआ है। गांव में किसी का किसी पर विश्वास नहीं है, न राज्य में, न देश में, न दुनिया में। इस तरह आज अविश्वास का वातावरण बना हुआ है। दुनिया में शांति की स्थापना करने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ नाम की एक बड़ी संस्था है। वहां सारे देशों के प्रतिनिधि आमने-सामने बैठते हैं और सोचते हैं कि दुनिया में शांति कैसे हो? लेकिन वे एक दूसरे पर अविश्वास करते है। हर एक को दूसरे का भय होता है। ग्राम पंचायत में ऐसा नहीं होगा। सब एक दूसरे पर विश्वास करेंगे। इसलिए भय का कोई दूसरा कारण ही नहीं होगा।

(3) ज्ञान : ग्राम पंचायत का तीसरा सदस्य ज्ञान होगा। आज गांव में कोई ज्ञान है ही नहीं। जो भी आदमी थोड़ा ज्ञान पाता है, गांव छोड़कर शहर भाग जाता है। सारा ज्ञान शहर के विश्वविद्यालयों में भरा पड़ा है। आज ज्ञानार्जन वही कर सकता है जिसके पास संसाधन हैं। पहले ऐसी बात नहीं थी। सैकड़ों भक्त गांव-गांव घूमते थे और लोगों को ज्ञान बांटते थे। लेकिन आज गांव-गांव में ज्ञान पहुंचाने की कोई सफल योजना नहीं है। अतः ग्राम पंचायत का एक सदस्य ही होगा ज्ञान, जो सबके पास पहुंचेगा।

(4) उद्योग : पंचायत का चौथा सदस्य होगा उद्योग। आज गांव में कोई उद्योग नहीं है। केवल खेती के आधार पर हिन्दुस्तान के देहातों का काम कैसे चलेगा? देहातों में खेती के साथ पूरक धन्धे भी होने चाहिए। गांव-गांव में ग्रामोद्योग लगाने की प्रतिज्ञा करनी होगी। तभी गांवों की बेरोजगारी हम दूर कर सकेंगें। कपड़ा हर एक की आवश्यकता की वस्तु है। प्रत्येक व्यक्ति को कम से कम 15 गज कपड़ा चाहिये, अतएव यह कपड़ा ग्राम पंचायत को स्वयं तैयार करना चाहिये।

(5) स्वच्छता : पंचायत का पांचवा सदस्य होगी स्वच्छता। बस्तियां स्वच्छ और निर्मल होनी चाहिये, जहां तहां गन्दगी नहीं फैलनी चाहिए। गांव में गन्दगी होगी तो बीमारी फैलेगी। इनसे गांव वालों को कौन बचायेगा? क्या सरकारी डाक्टर बचायेंगे? नहीं। उनका सर्वोत्तम वैद्य होगा स्वच्छता। स्वच्छता हर बात की होनी चाहिये। पानी और घर की स्वच्छता, मल-मूत्र का ठीक विसर्जन तथा आंख, कान और सभी कपड़ों की स्वच्छता होनी चाहिये।

पंचायत ग्रामसेवक सभा बने

ग्राम पंचायतों को चाहिये कि वे ग्राम सेवक सभा का रूप धारण करें। वे कभी शासक न बनें। वहां दण्ड नाम-मात्र का रहे। अगर कोई अड़ जाय तो उसे थोड़ी देर अड़ा ही रहने दें, लेकिन यदि दण्ड प्रयोग करने लगेंगे तो गांव से जिस दर्शन की अपेक्षा की जाती है, वह कभी न मिल सकेगा।

गांव का न्याय सर्वसम्मति से किया जाय। ग्राम पंचायतें चुने जाने के बाद समझें कि हम परमात्मा के सामने बैठे हुए हैं। ग्राम पंचायत की सभा में हमें ईश्वर को साक्षी बनाना चाहिये। ग्राम सभा में बैठे लोगों में करुणा होनी चाहिए। अगर उनमें करुणा न हो तो बुद्धिमान होने पर भी वे ठीक से सेवा न कर पायेंगे। अतः ग्रामसभा के सदस्यों का हृदय करुणा से ओत-प्रोत होना चाहिये।

गांव का स्वरूप गोकुल जैसा हो

विनोबा जी ने बताया था कि गांव गोकुल जैसा बने। गोकुल का सुख असीम था। गोपाल कृष्ण ने गांवों का वैभव बढ़ाया, गांवों की सेवा की, गांवों से प्रेम किया, गांवों के पशु-पक्षी, गांव की नदी, गांव का गोवर्धन पर्वत, सबसे उसने प्रेम किया। गांव ही उसका देवता रहा। आगे चलकर वह द्वारकाधीश बने। फिर भी वह गोकुल में रहना, गाय चराना, वनमाला पहनना, बंशी बजाना और गोप बालों के साथ खेलना कभी नहीं भूल पाए।

हमें देहातों को हरा-भरा गोकुल बनाना है, स्वावलम्बी, आरोग्य, सम्पन्न, उद्योगशील और निर्मल। ईख का कोल्हू चल रहा है, चरखा चल रहा है, धुनियां धुन रहा है, तेल का कोल्हू चूं-चर्र बोल रहा है, कुएं पर मोट चल रही है, गोपाल गायें चरा रहा है और बंशी बजा रहा है—ऐसा गांव बनने दें। अपनी गलती से हमने गांवों को मरघट बना दिया है। आइये अब हम सब मिलकर उसे पुनः गोकुल जैसा बनायें। यही विनोबा जी की आकांक्षा थी।

निष्कर्ष

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि आज भारत ग्राम पंचायतों की ओर बढ़ रहा है। भारतीय जन-जीवन की सहस्त्रों वर्षों की परम्परायें और संस्कारगत विविधतायें ग्रामोन्मुखी और श्रमाधारित ही रही हैं। बीच में विदेशी शासन और व्यापार के कारण हमारी ग्राम रचना छिन्न विच्छिन्न हो गयी थी और भारत आर्थिक दृष्टि

(शेष पृष्ठ 52 पर)

सफल मधुमक्खी पालन की जानकारी

हरीचन्द एवं रामाश्रित सिंह
तकनीकी पर्यवेक्षक एवं वरीय
वैज्ञानिक, कीट एवं कृषि जंतु विज्ञान
विभाग, राजेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय,
बिहार, पूसा - 848125 (समस्तीपुर)

मधुमक्खी पालन अर्थात् मौनपालन सीखने के लिये मौन के जीवन, स्वभाव, उनके कार्य, शरीर रचना, भोजन, रहन-सहन, शत्रु और बीमारी, उसकी रोकथाम तथा उपचारों का अध्ययन करना आवश्यक है। मौनपालन प्रारंभ करने से पूर्व यह आवश्यक है कि इसका क्रियात्मक ज्ञान भी हो, जो किसी मौनपालक शिक्षा केन्द्र या किसी अनुभवी मौनपालक से प्राप्त किया जा सकता है। आधुनिक और वैज्ञानिक विधि से मौनपालन की शिक्षा विविध राजकीय मौनपालन केंद्रों, खादी ग्रामोद्योग आयोग, अखिल भारतीय मौन और प्रशिक्षण समन्वय समिति केंद्र अथवा किसी स्वयंसेवी संस्था से प्राप्त की जा सकती है। मधुमक्खी पालन के बारे में विशेष जानकारी निम्नलिखित है :

मधुमक्खी की चार प्रमुख जातियां हैं जिनमें से सिर्फ दो को पाला जा सकता है। प्रथम भारतीय मधुमक्खी (एपिस सिराना इण्डिका) और दूसरी इटैलियन मधुमक्खी (एपिस मैलीफेरा) है। आज भारतीय मधुमक्खी एक जानलेवा बीमारी थाईसेक ब्रूड विषाणु से ग्रसित हो चुकी है। इटेलियन मधुमक्खी अभी तक इस बीमारी से रोगरोधी है तथा इसकी मधु उत्पादन क्षमता भारतीय मधुमक्खी की तुलना में अधिक है। इसे आधुनिक बक्सों में पाला जा सकता है। मधुमक्खी के एक परिवार (कालोनी) में तीन तरह के सदस्य होते हैं। रानी, नर तथा मजदूर।

रानी : एक कालोनी (परिवार) में केवल एक रानी होती है जो आकार में अन्य सदस्यों से बड़ी होती है। केवल यही एक मादा होती है। इसका काम सिर्फ अंडे देना होता है। यह दो से तीन साल तक जीवित रहती है। जब यह वृद्धा होने पर अंडे देने योग्य नहीं रहती तो मजदूर मक्खियां उसे मार डालती हैं।

नर : नर मक्खियां रानी से आकार में छोटी और मजदूर से बड़ी होती हैं। इनकी आंखें बड़ी, उदर गोल तथा इसमें मोमग्रन्थि, पराग थैली और डंक नहीं होते हैं। नर मक्खियां रानी मक्खी के प्रजनन में सहायक होती हैं।

मजदूर मधुमक्खी : छत्ते में इनकी संख्या सबसे अधिक होती है। ये बांझ होती हैं। ये आकार में छोटी, पतली, उदर नुकीला और डंकदार होता है। उदर की निचली सतह में मोम ग्रंथियां होती हैं। इनकी संख्या एक कालोनी में 35-80 हजार तक होती है। इनका कार्य नया छत्ता बनाना तथा उसकी मरम्मत करना, मधु और पराग एकत्रित करना, अंडे तथा शिशुओं का पालन पोषण, शत्रुओं से परिवार की रक्षा करना और बक्से को वातानुकूलित बनाए रखना होता है।

मधुमक्खी परिवार की विभिन्न अवस्थाएं (दिनों में)

तालिका

कालोनी के सदस्यों के पैदा होने का समय

क्र	स्थिति	रानी	नर	मजदूर
1.	अंडावस्था	3	3	3
2.	शिशु अवस्था	5	7	6
3.	कोशावस्था	8	14	12
	कुल समय (दिनों में)	16	24	21

मधुमक्खी पालन हेतु आधुनिक तथा वैज्ञानिक ढंग से बने उपकरण प्रयोग में लाये जा सकते हैं। इसमें से कुछ उन्नत तथा आवश्यक उपकरण इस प्रकार हैं :

1. **मौनगृह (बक्सा) :** भारत वर्ष में इटैलियन मधुमक्खियों को लौंगस्ट्राथ मौनबक्सों में पाला जाता है जिनका आंतरिक आकार 43 x 20 वर्ग से. मी. होता है। इसमें सामान्यतः 10 चौखटे होते हैं। इसकी लंबाई 45.51 से. मी. तथा चौड़ाई 37.30 से. मी. और

ऊंचाई 24.37 से. मी. होती है तथा आधार पट की मोटाई पौना इंच यानी 1.6 से.मी. होती है। ऊपरी ढक्कन, भीतरी ढक्कन, शिशुखंड, मधुखंड, आधार चौखट आदि इसके प्रमुख भाग हैं। मौन वंश प्राप्त करने के बाद सर्वप्रथम उन्हें शिशुखंड में बसाया जाता है।

2. **छत्ताधार** : मधुमक्खी पालन के लिए यह दूसरा आवश्यक भाग है। यह मधुमक्खी मोम के छत्ते का आधार होता है जिसे प्रत्येक चौखट के मध्य में लगा दिया जाता है। मौन इसी पर छत्ता बनाने को बाध्य हो जाती है।

3. **नकाब** : यह एक प्लास्टिक या कपड़े की जाली से बनी हुई टोपी होती है जो मधुमक्खी परिवारों का निरीक्षण करते समय मक्खियों के आक्रमण से चेहरे की रक्षा करती है।

4. **धुआंकार** : यह टीन (चादर) का बना भीतर से खोखला यंत्र होता है। धुएं के लिए इसके एक सिरे पर लकड़ी या फटे पुराने कपड़े रखकर जला दिये जाते हैं। धुआंकार को दबाने पर पतले भाग से धुआं निकलता है। इसका प्रयोग मौनों पर उस समय किया जाता है जब मौनों का निरीक्षण करना या मधु निकालना होता है।

5. **द्वाररक्षक** : यह पतली लकड़ी का बना होता है। इसकी लंबाई बक्से के प्रवेशद्वार के मुताबिक होती है। इसका प्रयोग बक्से के प्रवेशद्वार को घटाने या बढ़ाने के लिए किया जाता है।

6. **मधु निष्कासन यंत्र** : यह एक लोहे की चादर का ड्रमनुमा यंत्र होता है। इसके अंदर एक गियर बक्स लगा होता है। शहद निकालने के समय चौखट को इसमें रखकर सरलता से शहद निकाला जा सकता है।

7. **वाहन बक्स** : यह लकड़ी का बना हुआ होता है तथा इसमें पांच चौखटें रखने का स्थान रहता है। यह मधुमक्खी परिवार को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने के काम आता है।

8. **चाकू** : इससे छत्ते के कोशों को एक समान आसानी से काटा जा सकता है।

उपरोक्त उपकरणों के अतिरिक्त बहुत से छोटे साधारण उपकरणों का प्रयोग आंशिक रूप में किया जाता है। वे इस प्रकार हैं – भोजन पात्र, रानीरोक द्वार, रानीरोक पट, दस्ताना, पुरुष पाश, रानी डोली, रानी कोशिका रक्षक, चींटी रोक प्याली, रस्सी, धागा, कैंची, सिकोटियर, चौखटधार इत्यादि।

मौनों की वार्षिक व्यवस्था : इस व्यवसाय में समय के प्रतिबंध का बहुत महत्व है। थोड़ी सी असावधानी या विलम्ब से पूरे कार्य के खराब होने की आशंका होती है। मधुमक्खियों की वार्षिक व्यवस्था संक्षेप में दी जा रही है।

मौनपालन का आरंभ बिहार के उत्तरी क्षेत्र में अक्तूबर के अंतिम सप्ताह से लेकर नवम्बर माह तक करना चाहिए। क्योंकि इस समय में मकरंद और पराग देने वाले पौधे व फसलें अधिकता में होती है जो कि लगभग अप्रैल मई तक चलती रहती है। सर्दी से बचने के लिए मधुमक्खियां एक दूसरे से सटकर झुंड बना लेती हैं। जैसे-जैसे सर्दी बढ़ने लगती है मधुमक्खियां और अधिक सटकर बैठने लगती हैं। इसलिए सर्दी शुरू होने से पहले मौनगृहों का भली प्रकार से निरीक्षण करना चाहिए। खाली छत्तों को हटाकर सुरक्षित स्थान पर रख देना चाहिए। यदि खाद्य सामग्री की कमी हो तो सर्दियों के लिए कुछ विशेष मधु मौनगृह में ही छोड़ देना चाहिए। सर्दी अधिक हो जाने पर बक्सों के ऊपर टाट की बोरी अथवा पुआल की चटाई बनाकर रख देनी चाहिए। गर्मियों से बचाव करने के लिए मौनों को छायादार पेड़ों के नीचे रखना चाहिए। अधिक गर्मी हो जाने पर बक्से के ऊपर भीगी टाट की बोरी रख देनी चाहिए। इस समय में कृत्रिम भोजन की आवश्यकता हो तो दो भाग पानी तथा एक भाग चीनी का घोल गर्म करके बनायें और ठंडा होने पर देना चाहिए। वर्षा ऋतु में खाली छत्तों को बाहर निकाल कर कमजोर परिवारों को शक्तिशाली परिवारों में मिला देना चाहिए। प्रत्येक दो सप्ताह के बाद बक्सों को पूरा साफ करना चाहिए। इस समय मोमी कीड़े के प्रकोप से इन्हें बचाना चाहिए। मौन गृहों की दरारों को बंद कर देना चाहिए। मौन गृहों के पास खर पतवार को साफ करते रहना चाहिए। समयानुसार आवश्यकताओं की पूर्ति होने पर ही अधिकतम लाभ उठाया जा सकता है।

मधुमक्खी परिवारों का निरीक्षण

मधुमक्खी परिवारों की देखभाल उनके कार्यों को सफल और तेज करने के लिए आवश्यक होती है। इसके लिए वैज्ञानिक ढंग से बनाए गए आधुनिक बक्सों में मौन वंशों का निरीक्षण करना आसान है। काफी धूप, आंधी, वर्षा, ठंड और बादल वाले दिनों में बक्सों का निरीक्षण नहीं करना चाहिए। निरीक्षण करने के पहले

भारत में स्त्री-पुरुष अनुपात : एक विश्लेषण

अरविन्द कुमार सिंह

किसी भी विकसित और स्वस्थ समाज के निर्माण में स्त्री और पुरुष दोनों की बराबर सहभागिता आवश्यक है। जब भी दोनों के बीच असंतुलन उत्पन्न होता है तो सामाजिक व्यवस्था के विघटित होने की आशंका होती है। हमारी मान्यता है परंपरा को बनाए रखने के लिए पुत्र जरूरी है। बेटे की इस चाहत ने ऐसा रूप धारण कर लिया कि कन्या संतान की कामना और जन्म दोनों से ही समाज कतराने लगा और पुत्री के जन्म को अभिशाप माना जाने लगा।

भारत में स्त्री-पुरुष अनुपात प्रवृत्ति

भारत में पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों की संख्या केवल 1951 और 1981 को छोड़कर 1901 से 1991 तक लगातार गिरी है। निम्नलिखित सारणी से यह स्पष्ट है :–

भारत में स्त्री-पुरुष अनुपात विभिन्न वर्षों में

वर्ष	प्रति 1000 पुरुषों पर स्त्रियों की संख्या
1901	972
1911	964
1921	955
1931	950
1941	945
1951	946
1961	941
1971	930
1981	934
1991	927

भारत में स्त्रियों, पुरुषों के अनुपात की उल्लेखनीय प्रवृत्ति यह है कि भारत के अलग-अलग राज्यों में यह अनुपात अलग-अलग है। भारत में केरल ऐसा एकमात्र राज्य है जहां कि 1000 पुरुषों पर सर्वाधिक अर्थात 1036 स्त्रियां हैं और अरुणाचल प्रदेश में सबसे कम 858 स्त्रियां 1000 पुरुषों पर हैं।

स्त्री-पुरुष अनुपात राज्यवार आंकड़े-1991

राज्य	प्रति हजार पुरुषों पर स्त्रियों की संख्या
केरल	1036
आन्ध्र प्रदेश	972
असम	923
बिहार	911
गोआ	967
गुजरात	934
हरियाणा	865
हिमाचल प्रदेश	976
जम्मू कश्मीर	923
कर्नाटक	960
मध्य प्रदेश	931
महाराष्ट्र	934
मणिपुर	958
मेघालय	955
मिजोरम	921
नगालैण्ड	886
उड़ीसा	971
पंजाब	882
राजस्थान	910
सिक्किम	878
तमिलनाडु	974
त्रिपुरा	945
उत्तर प्रदेश	879
पश्चिम बंगाल	917
अरुणाचल प्रदेश	858
केन्द्र शासित प्रदेश	
अण्डमान नीकोबार	818
चण्डीगढ़	790
दादर नगर हवेली	952
दमनदीव	969
दिल्ली	827
लक्षद्वीप	943
पाण्डिचेरी	980

विपरीत परिणाम

पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में अधिक आयु की सम्भावना होती है। इसका प्रमाण उन्नत पश्चिमी देशों में मिलता है। जहां पुरुषों की तुलना में स्त्रियों की संख्या अधिक है। विडम्बना यह है कि भारत में 100 पुरुषों के विरुद्ध 108 स्त्रियों का जन्म होता है। परन्तु दुर्भाग्यवश भारत में यह प्रवृत्ति सम्पूर्ण जनसंख्या के सन्दर्भ में उलट जाती है।

भारत में गिरते स्त्री-पुरुष अनुपात के कारण :

बालिका भ्रूण हत्या और बालिका शिशु हत्या : स्त्री-पुरुष अनुपात में गिरावट का कारण बालिका भ्रूण हत्या और बालिका शिशु हत्या है। भारत में यह प्रवृत्ति बढ़ रही है और दुर्भाग्य से इसे सामाजिक स्वीकृति भी मिल रही है। आठवें दशक में नये चिकित्सा अनुसंधानों से गर्भ परीक्षण तथा गर्भपात सम्बन्धी सुविधाओं का तेजी से विस्तार हुआ है। उसी तेजी से स्त्री, पुरुष अनुपात गिरा है। अनेक समझदार और जिम्मेदार व्यक्ति भी परिवार नियोजन की इस क्रूर पद्धति से चिन्तित नहीं हैं तथा कुछ तो इस मानवघाती प्रथा को महिला कल्याण के रूप में देखते हैं। 13 सितम्बर 1994 को काहिरा में आयोजित नौ दिवसीय तीसरे संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या एवं विकास सम्मेलन में यह सर्वाधिक चर्चा का विषय रहा है और कुछ देशों के प्रतिनिधियों ने जोरदार और सटीक प्रश्न उटाया और गर्भपात एवं भ्रूण हत्या को अपराध बताया।

भारत में भ्रूण परीक्षण से सम्बन्धित कानूनों का अभाव है। लगातार घट रही महिलाओं की संख्या से सामाजिक असन्तुलन का खतरा नजर आने लगा तो सरकार ने राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास शुरू किया है। इसके लिए संयुक्त संसदीय प्रवर समिति का गठन हुआ जिसने अधिनियम सम्बन्धी रूप रेखा तैयार की लेकिन अभी इस पर संसद में बहस नहीं हो सकी है। कुछ राज्यों ने इस दिशा में अवश्य पहल की है। महाराष्ट्र देश का पहला राज्य है जिसने इस क्रूर प्रवृत्ति के खिलाफ कानून बनाया और लागू किया है । इसके अलावा पंजाब, हरियाणा और राजस्थान ने पहल की है।

निर्धनता : ऐसे देश में जहां अभी भी लगभग 30 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करती है, शिशु मृत्यु दर 80 प्रति हजार हो तथा नाम मात्र को चिकित्सा व्यवस्था उपलब्ध हो, वृद्धावस्था में सामाजिक सुरक्षा योजनाओं के अभाव के कारण बेटे को ही वृद्धावस्था का बीमा समझा जाता हो तो निश्चित रूप से स्त्रियों का अनुपात पुरुष अनुपात की तुलना में कम ही रहेगा। भारत में प्रजनन काल के दौरान स्त्रियों की उच्च मृत्यु दर भी गिरते हुए लिंग अनुपात का कारण है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण के अनुसार 15-44 वर्ष के प्रजनन आयु वर्ग में स्त्रियों की मृत्युदर पुरुषों की तुलना में 30 प्रतिशत अधिक है। लगभग दो तिहाई गर्भवती स्त्रियां रक्ताल्पता से ग्रस्त हैं, भारत में कुपोषण, रक्ताल्पता और समुचित देखभाल के अभाव में लगभग 40 प्रतिशत स्त्रियों की मृत्यु हो जाती है। मजदूरी करने वाली गरीब औरतों के लिए प्रसव के समय अस्पताल सुविधाओं का अभाव रहता है और इन्हें प्रसव के पूर्व और पश्चात की देखभाल तो उपलब्ध ही नहीं होती।

स्त्री-पुरुष अनुपात में दहेज प्रथा जैसे समाजशास्त्रीय तत्त्व भी भारत में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह विश्वास किया जाता था कि शिक्षा के प्रसार और जनसंख्या के शैक्षणिक स्तर में उन्नति के फलस्वरूप दहेज जैसी प्रवृत्तियों पर अंकुश लगेगा परन्तु विडम्बना यह है कि दहेज प्रथा और विकराल रूप धारण कर रही है। इस कारण लोग पुत्रियों की अपेक्षा पुत्रों को अधिक तरजीह देने लगे हैं और लोग लिंग-निर्धारण परीक्षण से यह पंता चलने पर कि बेटी पैदा होगी तो वे उसकी हत्या गर्भ में ही करा देते हैं। यह कितना क्रूर और जघन्य कार्य है।

स्त्री-पुरुष अनुपात असंतुलित होने पर समस्याएं :

गरीबी और अधिक जनसंख्या से ग्रस्त हमारा भारत देश जो पहले से ही दहेज प्रथा तथा निरक्षरता जैसी सामाजिक बुराइयों में जकड़ा है तो इस स्थिति में भ्रूण हत्या और गर्भपात की अनुमति देना एक और सामाजिक बुराई को बढ़ावा देना है। वास्तव में पिछले चार दशकों से हमारे देश में स्त्री पुरुष अनुपात घटकर बहुत कम रह चुका है यदि यही प्रवृत्ति आगे भी रही तो देश में अति असन्तुलित लिंग-अनुपात की समस्या खड़ी हो जायेगी। सामाजिक संतुलन इस कदर बिगड़ जायेगा कि हजारों युवक कुंवारे रह जायेंगे। इससे बहुपति प्रथा जन्म लेगी तथा असामान्य निम्न स्त्री पुरुष अनुपात समाज में अन्य अनेक यौन विसंगतियों के साथ-साथ वेश्यावृति तथा समलैगिंकता को भी बढ़ावा देगा। भारत जैसे अति जनसंख्या वाले देश में, जहां निरक्षरता अधिक है, इन विसंगतियों से "एड्स" जैसी भयंकर यौन और लाइलाज बीमारी भी फैल सकती है।

म. न. 284,
तिलक नगर, अल्लापुर,
इलाहाबाद (उ. प्र.) 211006

महिलाओं के विकास और कल्याण की ओर बढ़ते कदम

डा. उमेश चन्द्र*

वर्तमान में हमारे देश की कुल जनसंख्या 90 करोड़ की सीमा को पार कर चुकी है जिसमें महिलाओं और पुरुषों की संख्या क्रमशः 43.5 और 47 करोड़ है। इस प्रकार प्रति हजार पुरुषों पर स्त्रियों की संख्या केवल 927 है। पारिस्थितिक संतुलन की दृष्टि से यह संख्या बराबर-बराबर होनी चाहिए। महिलाओं की संख्या कम होने के लिए कई सामाजिक और आर्थिक कारण उत्तरदायी हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद से ही हमारे देश की सरकार द्वारा इन कारणों से निजात दिलाने हेतु संविधान में कुछ व्यवस्थाएं की गई हैं, अनेक अधिनियम लागू किए गए हैं और ढेरों कल्याणकारी योजनाएं चलाई गई हैं। इनके आशातीत परिणाम भी सामने आ रहे हैं।

भारतीय संविधान द्वारा महिलाओं को पुरुषों के समकक्ष सभी सुविधाएं और अवसरों की गारण्टी प्रदान की गई है। इसकी धारा 15 की व्यवस्थाओं द्वारा लिंग के आधार पर अथवा धर्म, जाति, देश, जन्म-स्थान आदि के आधार पर किसी के साथ किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं किया जा सकता। इसी प्रकार धारा 19 के अनुसार कोई भी नागरिक, चाहे वह स्त्री हो अथवा पुरुष, उसे अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता प्रदान की गई है तथा भारत के क्षेत्र मे कहीं भी विचरण करने का अधिकार दिया गया है। धारा 21 के अनुसार किसी भी व्यक्ति को चाहे वह स्त्री हो अथवा पुरुष, उसे अपने प्राण अथवा दैहिक स्वाधीनता से विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया को छोड़कर अन्य किसी प्रकार से वंचित नहीं किया जा सकता। इस प्रकार संविधान में भारत के सभी स्त्री और पुरुषों को बरावरी का, आजादी का, शोषण से बचाव का, धार्मिक आजादी का, संस्कृति और शिक्षा का सभी अधिकार समान रूप से दिए गये हैं जिससे उन्हें बराबरी के हक से कोई वंचित न कर सके।

महिलाओं को संविधान द्वारा प्रदत्त समानता के सभी अधिकारों को वास्तविकता में परिणत कराने और उनके हितों की रक्षा के लिए कुछ विशेष कानून भी सरकार ने बनाये हैं जैसे महिलाओं को वेश्यावृत्ति के अभिशाप से मुक्त कराने हेतु 1956 में वेश्यावृत्ति निवारण अधिनियम बनाया गया। इस अपराध के लिए कठोरतम सजा की व्यवस्था करने और उस सख्ती के साथ लागू करने हेतु 1986 में इसे संशोधित भी कर लिया गया है। दहेज की कुप्रथा को रोकने हेतु दहेज प्रतिबंध अधिनियम 1961 में बनाया गया था। इसे भी वर्तमान परिस्थितियों के अनुकूल बनाने हेतु 1986 में संशोधित कर लिया गया है। कार्यरत महिलाओं को प्रसूति से कुछ समय पूर्व और बाद में स्वास्थ्य लाभ हेतु विशेष सुविधा की व्यवस्था प्रसूति लाभ अधिनियम, 1961 द्वारा प्रदान की गई है। समान कार्य के लिए अथवा समान प्रकृति के कार्य के लिए महिलाओं को पुरुषों के समान पारिश्रमिक उपलब्ध कराने की अनिवार्यता को लागू करने हेतु समान वेतन अधिनियम 1976 में बनाया गया। विज्ञापनों, पोस्टरों और अन्य माध्यमों को अश्लील चित्रण निवारण अधिनियम, 1986 द्वारा प्रतिबंधित कर दिया गया है। विवाहित महिला के पति की मौत होने पर उसे पति के साथ जीवित जला देने की कुप्रथा पर रोक लगाने हेतु सती प्रथा निवारण अधिनियम लागू किया गया। इन अधिनियमों के अतिरिक्त विवाहित स्त्री के साथ क्रूरता का व्यवहार, विवाह से जुड़े अन्य अपराध, अपहरण का अपराध, खर्चे और जीवन पोषण के अधिकार, पुलिस द्वारा तलाशी, गिरफ्तारी आदि से संबंधित बनाये गये अनेक कानूनों के द्वारा महिलाओं को पर्याप्त सुरक्षा और उन्हें शोषण से बचाने हेतु प्रयास किए गये हैं।

महिलाओं को अनेकानेक कानूनी व्यवस्थाओं से उनके अधिकारों को संरक्षण प्रदान करने के साथ-साथ उनके लिए सरकार द्वारा अनेक विकास कार्यक्रम, कल्याणकारी योजनाएं और जागरूकता अभियानों का संचालन किया जा रहा है। केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड, महिला और बाल विकास विभाग, कल्याण

*संयुक्त निदेशक, प्रशिक्षण प्रभाग, राज्य नियोजन संस्थान, कालाकांकर भवन, उ. प्र., लखनऊ

विभाग, स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय, श्रम मंत्रालय, ग्रामीण विकास मंत्रालय आदि के द्वारा महिलाओं हेतु अनेकानेक कार्यक्रम और योजनाएं परिचालित हैं। उन्हें आर्थिक रूप से स्वतंत्र बनाने और उनकी आय बढ़ाने हेतु शिक्षा और व्यावसायिक प्रशिक्षण के अनेक संक्षिप्त कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं। विपत्ति में पड़ी महिलाओं के पुनर्वास हेतु प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापना, कामकाजी महिलाओं के लिए छात्रावासों की व्यवस्था, पारिवारिक समस्याओं, मानसिक तनाव, सामाजिक प्रताड़ना और शोषण से ग्रस्त महिलाओं और लड़कियों के लिए अल्पावधि निवास सदनों की स्थापना, ग्रामीण महिलाओं की आर्थिक दशा सुधारने हेतु ग्रामीण क्षेत्रीय महिला और बाल विकास कार्यक्रम, डवाकरा आदि अनेक महत्वपूर्ण कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं। महिलाओं पर अत्याचार रोकने, सामाजिक चेतना और जागरूकता उत्पन्न करने हेतु प्रचार माध्यमों का भरपूर उपयोग और स्वयंसेवी संगठनों के प्रशिक्षण की व्यवस्था भी की गई है।

यों तो स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद से इस दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाये गये हैं। जैसे पहली पंचवर्षीय योजना (1951-56) में मातृ सेवा केन्द्र तथा बाल स्वास्थ्य केन्द्रों की स्थापना और महिला मंडलों के विस्तार से सम्बन्धित कार्यक्रमों को प्रारम्भ किया गया। दूसरी योजना (1956-61) में महिलाओं को प्रतियोगी परीक्षाओं के लिए प्रशिक्षण की व्यवस्था और काम के स्थानों में शिशु सदन खोलने को प्राथमिकता दी गई। तीसरी योजना (1964-69) में उन्हें शिक्षा के अधिक अवसर देना और स्वास्थ्य पोषण और परिवार कल्याण कार्यक्रमों को महत्व प्रदान किया गया। चौथी योजना (1969-74) में गर्भवती और शिशुपोषित स्त्रियों हेतु पूरक खुराक कार्यक्रम चलाया गया। पांचवीं योजना (1974-79) में साक्षरता पर जोर तथा समाज कल्याण मंत्रालय में महिला कल्याण और विकास बोर्ड का गठन किया गया। इसी प्रकार छठी योजना (1980-85) में महिलाओं के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण केन्द्र और औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान खोले गये। तमिलनाडु और आन्ध्र प्रदेश में उन के लिए अलग विश्वविद्यालय खुले तथा महिलाओं से सम्बन्धित स्वयंसेवी संगठनों को वित्तीय सहायता देना प्रारम्भ किया गया। सातवीं योजना (1985-90) में मानव संसाधन विकास मंत्रालय में अलग से महिला और बाल विकास विभाग खोला गया तथा ग्रामीण महिला उद्यमियों के लिए विशेष प्रशिक्षण कार्यक्रमों का क्रियान्वयन प्रारम्भ हुआ। आठवीं योजना (1992-97) में राष्ट्रीय महिला कोष का गठन, रोजगार, शिक्षा और प्रशिक्षण कार्यक्रमों पर बल तथा विकास कार्यक्रमों में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने हेतु अनेक प्रावधान किये गये हैं। पिछले कुछ वर्षों में अनेक महत्वपूर्ण कार्य सम्पादित किए जा रहे हैं। जैसे 31 जनवरी, 1992 को राष्ट्रीय महिला आयोग का गठन किया जा चुका है। यह आयोग महिलाओं को संवैधानिक और कानूनी सुरक्षा के अधिकारों को ठीक ढंग से लागू कराता है। इसे उनसे सम्बन्धित आवश्यक संशोधनों और व्यवस्थाओं से सम्बन्धित सुझाव सरकार को देने का दायित्व सौंपा गया है। महिला विकास निगमों के स्थापित करने की योजना 1992-93 में राज्यों को हस्तान्तरित कर दी गई है जिसके माध्यम से विभिन्न राज्यों में महिला उद्यमियों का पता लगाने और उन्हें हर संभव सहायता प्रदान करने का कार्य किया जा रहा है। 27 अप्रैल, 1993 को राष्ट्रीय महिला कोष के गठन की घोषणा के साथ ही इसके लिए 31 करोड़ रुपये का प्रावधान कर दिया गया। इसके माध्यम से गरीब महिलाओं को उन्नति के पर्याप्त अवसर प्रदान करने हेतु गैर सरकारी संगठनों के माध्यम से स्वरोजगार हेतु ऋण उपलब्ध कराया जा रहा है। इस योजना के अन्तर्गत अब तक 30,000 महिलाओं को 3.36 करोड़ रुपये के ऋण स्वीकृत किए गए हैं। महिलाओं की आर्थिक स्थिति को सुधारने हेतु सरकार द्वारा एक विशेष योजना 2 अक्टूबर 1993 से 'महिला समृद्धि योजना' के नाम से प्रारम्भ की गई है। इस योजना में 45 लाख महिलाओं द्वारा 37.85 करोड़ रुपये की राशि जमा करके बहुत अच्छी शुरुआत की गई है। इससे आशातीत सफलता की संभावनाएं बलवती हुई हैं।

वर्ष 1982 से 50 चयनित जिलों से प्रारम्भ हुए ग्रामीण क्षेत्रीय महिला और बाल विकास कार्यक्रम को वर्ष 1994-95 में सभी 479 जिलों में कार्यान्वित कर दिया गया है जिसमें मार्च 1994 तक 73 हजार महिलाओं के समूह गठित करके उन्हें लाभान्वित किया गया है। बच्चों वाली कार्यरत महिलाओं को उनके छोटे बच्चों की देखभाल हेतु शिशु सदनों की बढ़ती मांग को पूरा करने हेतु 19.9 करोड़ रुपये के प्रावधान द्वारा एक 'राष्ट्रीय क्रैच फंड' की स्थापना भी कर दी गई है। ग्रामीण महिलाओं को समानता के लिए शिक्षा उपलब्ध कराने हेतु 1989 में प्रारम्भ हुई 'महिला समाख्या परियोजना' का सफल क्रियान्वयन चल रहा है। जनसंख्या में महिलाओं के घटते हुए अनुपात पर नियंत्रण हेतु 1994 में पारित अधिनियम के द्वारा 'गर्भ के दौरान यौन परीक्षण' को प्रतिबन्धित कर सरकार द्वारा प्रशंसनीय कदम उठाया गया है। इसी प्रकार अप्रैल, 1993 में पारित 73वें और 74वें संविधान संशोधन द्वारा ग्रामीण पंचायतों तथा नगरपालिकाओं में प्रत्येक

स्तर पर सदस्यों और अध्यक्षों के कुल पदों में से एक तिहाई पद महिलाओं के लिए आरक्षित कर एक ऐतिहासिक निर्णय लिया गया है। इसके परिणामस्वरूप ग्राम पंचायत स्तर पर लगभग 10 लाख सदस्यों और 80 हजार ग्राम प्रधानों के पद अब महिलायें संभालेंगी। इसी प्रकार क्षेत्र पंचायत स्तर पर यह संख्या क्रमशः 2 लाख और 18 हजार और जिला पंचायत स्तर पर 1500 सदस्य और 160 अध्यक्ष पदों पर महिलाएं पदारूढ़ हो जायेंगी। शहरी निकायों में भी इसी प्रकार हजारों की संख्या में महिलायें पदाधिकारी निर्वाचित होना सुनिश्चित हो गया है जिससे उनके हितों और अधिकारों का संरक्षण अवश्यम्भावी है। सरकारी नौकरियों में महिलाओं का प्रतिनिधित्व बढ़ाने हेतु उन्हें 30 प्रतिशत आरक्षण देने के सम्बन्ध में भी विस्तृत विचार विमर्श हुए हैं। कई राज्यों की सरकारी नौकरियों में उन्हें आरक्षण प्रदान भी कर दिया गया है।

महिलाओं को उनके प्रति हुए अत्याचारों के विरुद्ध शीघ्र और सुलभ न्याय दिलाने हेतु 'महिला-कोर्ट' जो सर्वप्रथम प्रयोग के तौर पर 1987 में आंध्र प्रदेश में प्रारम्भ किए गये थे, अब 2 सितम्बर, 1994 से दिल्ली में भी प्रारम्भ हो गये हैं। सितम्बर 1995 में पेइचिंग में होने वाले विश्व महिला सम्मेलन में भारत की ओर से रखे जाने वाले 'राष्ट्रीय प्रलेख' के स्वरूप पर विचार-विमर्श हेतु हैदराबाद, बंगलौर, जयपुर, पुणे, कलकत्ता और लखनऊ में उच्च स्तरीय संगोष्ठियों का सफलतापूर्वक आयोजन करने के बाद भारतीय विचारों से सम्मेलन को अवगत कराने हेतु सभी आवश्यक व्यवस्थाएं पहले ही पूर्ण कर लेना सरकार की महिला समस्याओं के प्रति गंभीर सोच का परिचायक है।

इस प्रकार केन्द्र और राज्य सरकारों के निरंतर प्रयास, स्वयंसेवी और गैर सरकारी संगठनों की भागीदारी और अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं तथा संगठनों के सहयोग से महिलाओं के सामाजिक-आर्थिक स्तर में निरंतर वृद्धि हुई है। ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में जहां रोजगार के अवसर प्राप्त होने से आर्थिक स्थिति बेहतर हुई है, उन्हें अपने अधिकार प्राप्त हुए हैं वहीं अब पुरुषों के साथ हर क्षेत्र में कंधे से कंधा मिलाकर और कई क्षेत्रों में आगे निकल कर अपनी प्रतिभा और कौशल दिखाने के अवसर प्राप्त हो रहे हैं। महिलाओं की साक्षरता दर जो 1951 में 8.8 प्रतिशत थी, अब बढ़कर 39.3 प्रतिशत तक पहुंच गई है। हालांकि शत-प्रतिशत साक्षरता का लक्ष्य अभी प्राप्त किया जाना कोसों दूर है। प्राथमिक विद्यालयों में 1951 के मुकाबले अब आठ गुनी लड़कियां पढ़ने जा रही हैं। लगभग ३० लाख से भी अधिक महिलाएं आज संगठित क्षेत्र में कार्यशील होकर राष्ट्रीय विकास में भागीदारी निभा रही हैं। इनमें से 62 प्रतिशत अर्थात 24 लाख महिलाएं सरकारी क्षेत्र में तथा 14 लाख निजी क्षेत्र में कार्यरत हैं। वर्ष 1992 मे 25 महिला कैडिटों को सेना में अफसरों के रूप में भर्ती किया जा चुका है। 1993 में भारतीय नौ सेना में 22 महिलाओं के प्रवेश ने एशिया में (दक्षिणी कोरिया के बाद) भारत को दूसरे नम्बर पर पहुंचाकर अपने अदम्य साहस का परिचय दिया है। शिक्षा और चिकित्सा जैसे महत्वपूर्ण व्यवसायों में कुशलता के साथ ख्याति अर्जित करने के बाद अब वे प्रशासन, न्याय, राजनीति, पुलिस, इंजीनियरी और तकनीकी आदि क्षेत्रों में प्रतिस्पर्द्धा कर रही हैं। भारतीय वायुसेना में 17 दिसम्बर 1994 को 72 'महिला पाइलट अफसरों' की नियुक्ति के बाद इन्होंने यह साबित कर दिया है कि वे अब पुरुषों के एकाधिकार समझे जाने वाले क्षेत्रों में और भी अधिक कुशलता और शौर्य का प्रदर्शन कर सकने में सक्षम हैं।

उक्त विवरण से स्पष्ट है कि देश में महिलाओं की स्थिति में प्रत्येक क्षेत्र में सुधार हो रहा है। लेकिन समाज में उन्हें वांछित स्थान दिलाने हेतु अभी भी इस ओर बहुत कुछ किया जाना बाकी है। वास्तविकता यह है कि महिलाओं की स्थिति बदलने के लिए तमाम सरकारी और कानूनी प्रयास तब ही अधिक कारगर हो सकते हैं जब कि समाज के सम्पूर्ण सोच, रवैये और पूर्वाग्रहपूर्ण धारणाओं में भी उनके प्रति बदलाव आये। दुर्भाग्यवश हमारी तमाम वैज्ञानिक और औद्योगिक प्रगति और आधुनिकता को अंगीकार करने के हमारे अनेकानेक दावों तथा नारी आंदोलनों की विकास यात्राओं के बावजूद समाज के सोच, रवैये और पूर्वाग्रहपूर्ण धारणाओं में जो परिवर्तन आ रहा है उसकी गति बहुत धीमी है। परिणामस्वरूप इक्कीसवीं शताब्दी की ओर बढ़ते भारत में अनेक महिलाएं आज भी बाधाओं, वर्तनाओं और वंचनाओं की शिकार हैं जिन्हें लक्ष्य बनाकर अभी हमें उनके लिए लड़ाई जारी रखनी है। निश्चय ही इस मिशन में सफलता प्राप्त होगी।

पंचायत राज में केवल पंचायत की आज्ञा मानी जाएगी और पंचायत अपने बनाये हुए कानून के द्वारा ही अपना कार्य करेगी।

–महात्मा गांधी

भारत का ग्रामीण शैक्षिक परिवेश

धनंजय चोपड़ा
निदेशक, समाज सेवा सदन, इलाहाबाद

शिक्षा सर्वोच्च मानवीय गुण माना जाता है। शिक्षा ग्रहण कर सकने की क्षमता के कारण ही मानव अन्य जीव जन्तुओं से पृथक होकर एक अतुलनीय मानव सभ्यता का विकास करने में सफल हो पाया है। शिक्षा मनुष्य के मन-मस्तिष्क के साथ-साथ उसकी आत्मा पर भी प्रभाव डालती है जिससे उसमें सामाजिक सहचर्य और सद्भाव की भावना बलवती हो उठती है तथा वह प्रकृति के साथ अनुकूलन स्थापित करके एक नये सामाजिक ताने-बाने को जन्म दे देता है। महात्मा गांधी कहा करते थे कि "शिक्षा से अभिप्राय बच्चे के शरीर, मन और आत्मा में विद्यमान सर्वोत्तम गुणों का सर्वांगीण विकास करना है।" दूसरे शब्दों में शिक्षा वह सामाजिक प्रक्रिया है जिसका उद्देश्य व्यक्ति में उन गुणों का विकास करना है जिनके द्वारा वह अपने सामाजिक तथा भौतिक पर्यावरण से ताल-मेल करके अपने व्यक्तित्व के साथ-साथ अपने समाज का भी विकास कर सके।

किसी देश की बौद्धिक और आर्थिक प्रगति वहां की शिक्षा व्यवस्था पर निर्भर करती है और यदि देश भारत जैसी विशाल जनसंख्या वाला हो तो बौद्धिकता तथा आर्थिक ढांचे के बीच सामंजस्य स्थापित करना अत्यन्त आवश्यक हो जाता है। यद्यपि हमारे देश में शिक्षा का स्तर लगभग सभी विकासशील देशों की तुलना में अत्यन्त उच्च कोटि का है लेकिन हमारी शिक्षा व्यवस्था का फैलाव मात्र शहरों में होने के कारण कुल जनसंख्या का लगभग आधा भाग ही शिक्षित है।

भारत एक गांव प्रधान देश है। यहां की लगभग 74 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में बसती है। इसलिए ग्रामीण शैक्षिक परिवेश को उन्नत बनाए बिना हम पूर्ण साक्षरता के लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सकते। स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पश्चात् से ही भारत सरकार ने शिक्षा पर ध्यान देना प्रारम्भ कर दिया था। 1948 में डा. राधाकृष्णन की अध्यक्षता में ग्रामीण शैक्षिक वातावरण का विकास करने हेतु उपाय सुझाने के उद्देश्य से एक आयोग का गठन किया गया। इस आयोग ने ग्रामीण शिक्षा को ग्रामीण विकास के साथ जोड़ने के अनेक उपाय सुझाये थे जिनको ध्यान में रखकर "राष्ट्रीय ग्रामीण उच्चतर शिक्षा परिषद" का गठन किया गया था। यह परिषद ग्रामीण शिक्षा के विकास हेतु सरकार की सलाहकार के रूप में कार्य करती थी। तब से सरकार ने शिक्षा व्यवस्था में सुधार लाने तथा ग्रामीण शिक्षा की दशा को सुधारने के कई प्रयास किये हैं। 1986 में घोषित राष्ट्रीय शिक्षा नीति में सन् 1995 तक देश में 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध कराने का संकल्प रखा गया था। लेकिन अनिवार्य शिक्षा के इस कार्यक्रम में आशा के अनुरूप सफलता नहीं मिल सकी है।

बढ़ती जनसंख्या और शहरों की ओर होते पलायन ने गांवों के शिक्षा के विकास को कभी पनपने नहीं दिया। लेकिन अब स्थितियां बदल रही है। रोजगार की कमी और शहरी परिस्थितियों से तालमेल न बिठा पाने के कारण लोगों ने गांवों में ही सम्भावनायें खोजना प्रारम्भ कर दिया है। सरकार भी इन बदलती परिस्थितियों में अपनी ग्रामीण योजनाओं को दृढ़ता के साथ क्रियान्वित कर रही है। पंचायती राज संस्थाओं को मजबूत करने हेतु विधेयक संसद में पास हो चुका है। सरकार चाहती है ग्रामीण विकास और ग्रामीण शिक्षा का समस्त दायित्व अब पंचायती राज संस्थायें उठाएं। इसी सन्दर्भ में कर्नाटक के भूतपूर्व मुख्यमंत्री श्री वीरप्पा मोइली की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया गया था। मोइली समिति ने अपने प्रतिवेदन में पंचायती राज संस्थाओं में हर स्तर पर शिक्षा समितियों और उपसमितियों के गठन की अनुशंसा की। इस समिति ने अपने प्रतिवेदन में ग्रामीण क्षेत्रों में उच्च शिक्षा और साक्षरता को साथ-साथ लेकर चलने की बात कही है ताकि शिशु सुरक्षा, परिवार नियोजन, स्वास्थ्य समस्याओं जैसे विषयों के प्रति जागरूकता पैदा की जा सके। समिति के अनुसार गांवों में शिक्षा समितियों को अपने स्तर पर ही संसाधनों को जुटाने का अधिकार मिलना चाहिये।

आठवीं पंचवर्षीय योजना में सरकार ने शिक्षा को रोजगार और उत्पादकता के बीच संपर्क कड़ी के रूप में विकसित करने का उद्देश्य रखा है। देश में शत-प्रतिशत साक्षरता के लक्ष्य को प्राप्त करने के साथ-साथ ग्रामीण क्षेत्रों के लिये, विशेषकर ग्रामीण महिलाओं के लिए शिक्षा की व्यवस्था करने की बात भी इस

योजना में कही गयी है। एक सर्वेक्षण के अनुसार लड़कियों द्वारा प्राथमिक स्तर पर ही स्कूल छोड़ देने की दर लगभग 50 प्रतिशत है। यही नहीं लगभग 15 प्रतिशत लड़कियां घर और खेतों में काम करने के कारण स्कूल में प्रवेश ही नहीं लेतीं। यही कारण है कि आठवीं योजना में उच्च शिक्षा के स्थान पर प्राइमरी शिक्षा और निरक्षरता को दूर करने पर और बल दिया जा रहा है। यही नहीं प्रतिभाशाली तथा गरीब विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति और शुल्क में रियायत देकर उच्च शिक्षा का आधार मजबूत करने का प्रयास भी किया जा रहा है।

आठवीं योजना में ग्रामीण शिक्षा के परिवेश को सुधारने के लिए पंचायती राज संस्थाओं के साथ-साथ स्वयंसेवी संस्थाओं का भी सहयोग लिया जा रहा है। लोगों को शिक्षा के प्रति जागरूक करने के लिए स्वयंसेवी संस्थाएं सहयोग दे रही हैं। साथ ही साथ अभिभावकों को प्रोत्साहन देने के लिए कई लाभकारी योजनायें चलायी जा रही हैं ताकि वे अपने परिवार की सभी सन्तानों को, चाहे वह लड़का हो या लड़की, शिक्षा प्राप्त करने के लिए भेज सकें।

दूसरी ओर सरकार ग्रामीण शिक्षा के क्षेत्र में रोजगार उपलब्ध कराने का भी प्रयास कर रही है। कई संस्थानों ने इस ओर पहल की है और ग्रामीण तकनीक तथा प्रबन्ध में पाठ्यक्रमों को प्रारम्भ किया है। इन्हीं संस्थानों में से कुछ ने लोगों में ग्रामीण परिवेश के प्रति मानवीय संवेदना तथा सरल जीवन-शैली के प्रति आकर्षण विकसित करने का भी प्रयास करना प्रारम्भ किया है। इनमें मध्य प्रदेश सरकार द्वारा स्थापित "चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय" का नाम प्रमुख है।

यदि हम अशिक्षा के परिणामों की ओर ध्यान दें तो बढ़ती जनसंख्या की समस्या सबसे अधिक भयावह रूप से सामने आ रही है। इसके कारण एक ओर प्राकृतिक संसाधनों की कमी पड़ती जा रही है और दूसरी ओर कई विकास योजनायें पूरी तरह सफल नहीं हो रही हैं।

हम सबको यह स्वीकार करना होगा कि निरक्षरता और जनसंख्या वृद्धि की समस्या से ही ग्रामीण क्षेत्रों में पिछड़ेपन और आर्थिक असमानता की समस्यायें बढ़ी हैं। यदि हम इस विषम परिस्थिति से उबरना चाहते हैं तो हमें सरकार पर सब कुछ न छोड़कर स्वयं भी कुछ प्रयास करने चाहिये। यद्यपि संकल्प बहुत ऊंचा और लक्ष्य बहुत दूर है फिर भी यदि हम सब मिलकर कदम बढ़ायें तो दूरियां मिटाई जा सकती हैं और "पूर्ण शिक्षित भारत" के सपने को साकार किया जा सकता है।

"आंचल" 906 ए/527
एच-3 कक्कड़ नगर,
दरियाबाद, इलाहाबाद-211003

(पृष्ठ 41 का शेष)

पंचायती राज पर विनोबा...

से नितान्त पराधीन, पंगु और हीन बन गया था। लेकिन अब भारत की चेतना ने समझ लिया है कि भारत का वास्तविक स्वरूप ग्राम-परिपूर्णता में व्यक्त है। ग्राम देवता ही भारत का उपास्य है। देश तभी प्रगति कर सकेगा जब गांवों में रहने वाले लोग हर दृष्टि से सजग हो जाएं। यदि हमारे गांव प्रगति की ओर बढ़ेंगे तो भारत एक मजबूत राष्ट्र बनेगा और कोई भी इसको आगे बढ़ने से रोक नहीं पायेगा। यही विनोबा जी की कल्पना गांवों के बारे में थी।

35, नगर महापलिका कालोनी,
शिवपुर-221003,
वाराणसी (उ.प्र.)

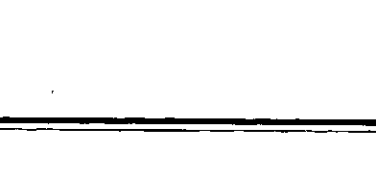

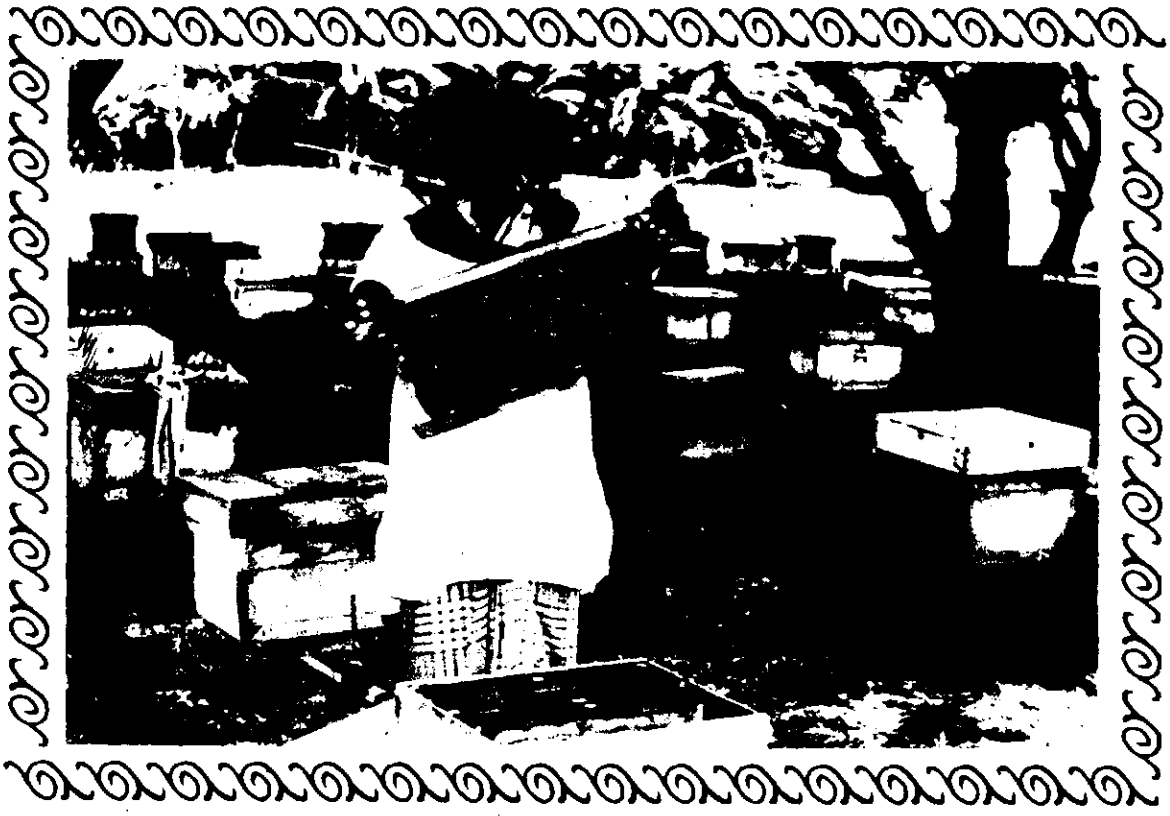

मधुमक्खी परिवार के निरीक्षण का तरीका

डाक-तार पंजीकरण संख्या : (डी (डी एल). 12057/95
पूर्व भुगतान के बिना डी. पी. एस. ओ. दिल्ली में डाक में डालन
की अनुमति (लाइसेंस) : यू (डी एन)-55

P & T Regd. No. D/(DL) 12057/95
Licenced under U (DN)-55
to post without pre-payment at DPSO, Delhi-54

आपकी जरूरत, हमसे बेहतर जाने कौन ?

संघ एवं राज्य लोक सेवा आयोग की सिविल सेवा परीक्षाओं (प्रारम्भिक तथा मुख्य) के सामान्य अध्ययन प्रश्न पत्र की बेहतर तैयारी के लिए प्रस्तुत है – परीक्षोपयोगी सीरीज

एक सरल एवं उच्चकोटि की परीक्षोपयोगी सीरीज

सिविल सेवा परीक्षा की तैयारी के लिए महत्वपूर्ण उपयोगी, प्रामाणिक एवं विश्लेषणात्मक सामग्री आपकी जरूरत के अनुसार क्योंकि वर्षों के अनुभव से हम जानते हैं कि कब आपको क्या चाहिये।

परीक्षोपयोगी सीरीज 1	भारतीय अर्थव्यवस्था	मूल्य – रू. 50.00
परीक्षोपयोगी सीरीज 2	भूगोल–भारत एवं विश्व	मूल्य – रू. 45.00
परीक्षोपयोगी सीरीज 3	भारतीय इतिहास	मूल्य – रू. 40.00
परीक्षोपयोगी सीरीज 4	भारतीय राजव्यवस्था	मूल्य – रू. 40.00
परीक्षोपयोगी सीरीज 5	भारतीय कला एवं संस्कृति	मूल्य – रू. 40.00
परीक्षोपयोगी सीरीज 6	सामान्य विज्ञान	मूल्य – रू. 50.00

हिन्दी की सर्वाधिक बिकने वाली सामान्य ज्ञान पत्रिका

जब उपलब्ध हैं सामान्य अध्ययन के लिए अतिरिक्तांक

तब क्या करेंगे मात्र विशेषांक ?

आज ही अपने निकटतम पुस्तक विक्रेता से खरीदें या पूरा मूल्य निम्न पते पर भेज कर प्राप्त करें

प्रतियोगिता दर्पण 2/11, स्वदेशी बीमा नगर, आगरा – 282002 फोन – 351002, 350002, 351238 फैक्स – 0562-351251

निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली - 110001 द्वारा प्रकाशित और आकाशदीप प्रिन्टर्स, नई दिल्ली - 110002 द्वारा मुद्रित